कामायनी छायावाद की एक प्रमुख कृति

त्रिभुवन विश्वविद्यालय

मानविकी तथा सामाजिक शास्त्र संकाय

हिंदी केन्द्रीय विभाग

कीर्तिपुर, काठमाण्डौ

के लिए

एम.ए. हिंदी के चतुर्थ सत्र के

पंचम पत्र (विषय कोड ५७०) के

रूप में प्रस्तुत

शोधपत्र

शोधार्थी

विभा कुमारी दास

हिन्दी केन्द्रीय विभाग

त्रिभुवन विश्वविद्यालय कीर्तिपुर

काठमाण्डौ, नेपाल

२०७५

सिफारिस पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि "कामायनी छायावाद की एक प्रमुख कृति" शोधपत्र मेरे निर्देशन में हिन्दी विभाग की छात्रा विभा दास ने तैयार किया है । एम.ए. हिंदी के चतुर्थ सत्र के पंचम पत्र (विषय कोड ५७०) के रूप में प्रस्तुत इस शोधपत्र को त्रिभुवन विश्वविद्यालय द्वारा स्वीकृति देने और उचित मूल्यांकन के लिए सिफारिश करती हूँ ।

.....

डॉ.श्वेता दीप्ति

शोधनिर्देशक

उपप्राध्यापक

हिन्दी केंद्रीय विभाग

त्रिभुवन विश्वविद्यालय कीर्तिपुर, काठमाण्डौ ।

दिनांक :२०७५/०९/०९

स्वीकृति प्रमाणपत्र

त्रिभुवन विश्वविद्यालय मानविकी तथा सामाजिक शास्त्र संकाय अन्तर्गत हिन्दी केन्द्रीय विभाग की छात्रा विभा दास द्वारा तैयार किया गया "कामायनी छायावाद की एक प्रमुख कृति" शीर्षक का शोधपत्र आवश्यक मूल्यांकन कर स्वीकृत किया गया है ।

मूल्यांकन समिति

क्र.स.	**पद**	**नाम**	**हस्ताक्षर**
१.	विभागीय प्रमुख	डा.संजीता वर्मा	.....
२.	शोधनिर्देशक	उप प्रा. डा.श्वेता दीप्ति	.....
३.	बाह्य परीक्षक	डिल्लीराम शर्मा	.....

दिनांक : २०७५/०९/०९

भूमिका

त्रिभुवन विश्वविद्यालय,हिन्दी केन्द्रीय विभाग अन्तरगत मानविकी तथा सामाजिक शास्त्र संकाय एम.ए. हिन्दी के चतुर्थ सत्र के पंचम पत्र प्रयोजन के लिए यह शोधपत्र तैयार किया है ।

प्रस्तुत शोधपत्र हमनें हिन्दी केन्द्रीय विभागीय शोधनायक डाँ.श्वेता दीप्ति के निर्देशक में पुरा किया है । उन्होनें शोधपत्र चयन (लेखन)में उल्लेखनीय सहयोग किया साथ ही इसके प्रारंभ से अंत तक मुझे निरंतर निर्देशन, सलाह एंव सुझाव दिए। मेरी त्रुटियों एवं कमजोरियों को सुधारने में भरपूर मदद करते हुए इस कार्य में मुझे सक्रिय रुप से जुटने एवं उर्जान्वित रखने में सराहनीय भुमिका निर्वाह किया है ।उनके कुशल मार्गदर्शन से ही यह परियोजना सफल हुई है ।

हिन्दी केन्द्रीय विभाग की विभागीय प्रमुख सहप्रध्यापक डाँ.संजीता वर्मा के प्रति हार्दिक अभार व्यक्त करती हूँ, जिन्हाने शोधपत्र तैयार करते समय सलाह सुझाव, हौसला एवं सन्दर्भ समाग्री उपलब्ध कराने में सहायता की । इसके साथ ही शोध कार्य हेतु और निरन्तर हौसला बढाने के लिए अभार व्यक्त करती हूँ।

सदैव सहयोग, असीम स्नेह, प्रेरणा और उत्साह प्रदान करने के लिए परम पूज्य मातापिता को सहहृदय धन्यवाद व्यक्त करती हूँ ।इसके साथ ही किरेदार निभाने वालो शुभचिन्तकको सहहृदय कृतज्ञता अर्पण करती हूँ । इसी प्रकार प्राविधिक रुपसे सहयोग करने के लिए सहदेव कम्प्युटर सर्भिस को धन्यवाद अर्पण करती हूँ ।

विषयसूची

प्रथम अध्याय **१**

१.१ शोधपरिचय १

१.२ शोध प्रयोजन १

१.३ समस्या कथन १

१.४ शोध कार्य का उद्देश्य २

१.५ पूर्व कार्य की समीक्षा ३

१.६ शोध कार्य का औचित्य ३

१.७ अध्ययन की सीमा ३

१.८ शोधविधि ४

१.९ शोधपत्र की रुपरेखा ४

द्‌वितीय अध्याय **५**

२.१ जयशंकर प्रसाद जीवनी ५

२.२ प्रारंभिक जीवनी: ५

२.३ प्रसाद की शैली ७

तृतीय अध्याय **११**

छायावाद की प्रवृत्तियां **११**

३.१ जयशंकर प्रसाद और छायावाद २१

३.२ राष्ट्रीय चेतना के कवि प्रसाद २८

३.३ छायावादी कवि ३३

चतुर्थ अध्याय **४३**

कामायनी छायावाद की एक प्रमुख कृति **४३**

४.१ मनु की कथा ५२

४.२ कामायनी का आधुनिक संदर्भ ५२

४.३ प्रसाद की कामायनी इतिहास और कल्पना का समन्वय ५३

४.४ कामायनी की विशेषता ५७

४.५ कामायनी की शैली ५९

४.६ कामायनी का उद्देश्य ६०

४.७ निष्कर्ष ६१

पंचम अध्याय **६२**

उपसंहार **६२**

सन्दर्भ सूची **६४**

प्रथम अध्याय

१.१ शोधपरिचय

प्रस्तुत शोधपत्र में जयशंकर प्रसाद रचित छायावाद की एक प्रमुख कृति कामायनी के विभिन्न पहलू पर चर्चा की गई है । प्रसाद छायावादी युग के चार प्रमुख स्तंभों में से एक महान लेखक के रूप में प्रख्यात रहे । विविध रचनाओं के माध्यम से मानवीय करूणा और भारतीय मनीषा के अनेकानेक गौरवपूर्ण पक्षों का उद्घाटन आपने किया है । ४८ वर्षो के छोटे से जीवन में कविता, कहानी, नाटक, उपन्यास और आलोचनात्मक निबंध आदि विभिन्न विधाओं में रचनाएँ की। काव्य साहित्य में कामायनी बेजोड़ कृति है ।

१.२ शोध प्रयोजन

प्रस्तुत शोधपत्र “कामायनी छायावाद की एक प्रमुख कृति” चतुर्थ सत्र के अंतिम पत्र ५७० के लिए तैयार किया गया है । शोध का आधार सम्बन्धित पुस्तक का अध्ययन, पुस्तकालय और गुगल पुस्तक है ।

१.३ समस्या कथन

कामायनी हिंदी भाषा का एक महाकाव्य है। इसके रचयिता जयशंकर प्रसाद हैं। यह आधुनिक छायावादी युग का सर्वोत्तम और प्रतिनिधि हिंदी महाकाव्य है। ‘प्रसाद’ जी की यह अंतिम काव्य रचना 1936 ई. में प्रकाशित हुई, परंतु इसका प्रणयन प्रायः 7-8 वर्ष पूर्व ही प्रारंभ हो गया था। ‘चिंता’ से प्रारंभ कर ‘आनंद’ तक 15 सर्गों के इस महाकाव्य में मानव मन की विविध अंतर्वृत्तियों का क्रमिक उन्मीलन इस कौशल से किया गया है कि मानव सृष्टि के आदि से अब तक के जीवन के मनोवैज्ञानिक और सांस्कृतिक विकास का इतिहास भी स्पष्ट हो जाता है।

कला की दृष्टि से कामायनी छायावादी काव्यकला का सर्वोत्तम प्रतीक माना जा सकता है। चित्तवृत्तियों का कथानक के पात्र के रूप में अवतरण इस काव्य की अन्यतम विशेषता है। और इस दृष्टि से लज्जा, सौंदर्य, श्रद्धा और इड़ा का मानव रूप में अवतरण हिंदी साहित्य

की अनुपम निधि है।कामायनी प्रत्यभिज्ञा दर्शन पर आधारित है। साथ ही इस पर अरविन्द दर्शन और गांधी दर्शन का भी प्रभाव यत्र तत्र मिल जाता है।

प्रसाद ने इस काव्य के प्रधान पात्र 'मनु' और कामपुत्री कामायनी 'श्रद्धा' को ऐतिहासिक व्यक्ति के रूप में माना है, साथ ही जलप्लावन की घटना को भी एक ऐतिहासिक तथ्य स्वीकार किया है। शतपथ ब्राह्मण के प्रथम कांड के आठवें अध्याय से जलप्लावन संबंधी उल्लेखों का संकलन कर प्रसाद ने इस काव्य का कथानक निर्मित किया है, साथ ही उपनिषद् और पुराणों में मनु और श्रद्धा का जो रूपक दिया गया है, उन्होंने उसे भी अस्वीकार नहीं किया, वरन् कथानक को ऐसा स्वरूप प्रदान किया जिसमें मनु, श्रद्धा और इड़ा के रूपक की भी संगति भली भाँति बैठ जाए। परंतु सूक्ष्म सृष्टि से देखने पर जान पड़ता है कि इन चरित्रों के रूपक का निर्वाह ही अधिक सुंदर और सुसंयत रूप में हुआ, ऐतिहासिक व्यक्ति के रूप में वे पूर्णतः एकांगी और व्यक्तित्वहीन हो गए हैं।

मनु मन के समान ही अस्थिरमति हैं। पहले श्रद्धा की प्रेरणा से वे तपस्वी जीवन त्याग कर प्रेम और प्रणय का मार्ग ग्रहण करते हैं, फिर असुर पुरोहित आकुलि और किलात के बहकावे में आकर हिंसावृत्ति और स्वेच्छाचरण के वशीभूत हो श्रद्धा का सुख-साधन-निवास छोड़ झंझा समीर की भाँति भटकते हुए सारस्वत प्रदेश में पहुँचते हैं । श्रद्धा के प्रति मनु के दुर्व्यवहार से क्षुब्ध काम का अभिशाप सुन हताश हो किंकर्तव्यविमूढ़ हो जाते हैं और इड़ा के संसर्ग से बुद्धि की शरण में जा भौतिक विकास का मार्ग अपनाते हैं। वहाँ भी संयम के अभाव के कारण इड़ा पर अत्याचार कर बैठते हैं और प्रजा से उनका संघर्ष होता है। इस संघर्ष में पराजित और प्रकृति के रुद्र प्रकोप से विक्षुब्ध मनु जीवन से विरक्त हो पलायन कर जाते हैं और अंत में श्रद्धा के पथप्रदर्शन में उसका अनुसरण करते हुए आध्यात्मिक आनंद प्राप्त करते हैं। इस प्रकार श्रद्धा–आस्तिक्य भाव–तथा इड़ा–बौद्धिक क्षमता–का मनु के मन पर जो प्रभाव पड़ता है उसका सुंदर विश्लेषण इस काव्य में मिलता है।

१.४शोध कार्य का उद्देश्य

इस शोधकार्य के अर्न्तगत विषय वस्तुसे सम्बन्धित निम्नलिखित उद्देशयों को उजागर किया गया है –

क. प्रसाद का व्यक्तित्व

ख. प्रसाद की रचनाएँ

ग. प्रसाद रचित कामायनी को छायावाद की एक प्रमुख कृति के रुप में स्थापित करना ।

घ.प्रसाद की भाषा, शैली आदि ।

१.५ पूर्व कार्य की समीक्षा

प्रसाद हिन्दी साहित्य के इतिहास में सर्वविख्यात व्यक्तित्व हैं । कामायनी हमारे पाठयक्रम में शामिल है इसलिए स्वाभाविक तौर पर हमारी रुचि इसके प्रति रही है । कामायनी छायावाद की अद्‌भुत कृति है । इस पर पर्याप्त शोध कार्य हुए हैं । इसलिए एम ए की परीक्षा के लिए तैयार यह शोधपत्र कोई नया और महान कार्य है यह कहने की धृष्टता मैं नहीं कर सकती । यह महज एक कोशिश है जो उधार पर आधारित है ।

१.६ शोध कार्य का औचित्य

कामायनी छायावाद की प्रतिनिधि कृति है । इसका अध्ययन हमें इतिहास से जोड़ता है । इतिहास की कथाओं को जानने और समझने का अवसर मिलता है । इस कृति का चाहे जितनी भी बार अधययन किया जाय कुछ न कुछ नया हमें इसमें मिलता है । इसलिए इसमें शोध की कई सम्भावनाएँ निहित हैं ।

१.७ अध्ययन की सीमा

इस शोध कार्य में कवि जयशंकर प्रसाद की प्रतिनिधि कृति कामायनी को विषय बनाया गया है । इसलिए स्वाभाविक रुप से कामायनी पर विस्तार से ध्यान दिया गया है । किन्तु इसके अतिरिक्त प्रस्तुत शोधपत्र में प्रसाद से सम्बन्धित कई पहलुओं का साधारण अध्ययन और आपके जीवन से जुड़े अन्य पक्षों पर भी ध्यान दिया गया है ।

१.८ शोधविधि

प्रस्तुत शोधपत्र में विषय से सम्बन्धित पुस्तकों के अध्ययन के अलावा निर्देशक के अनुभवों तथा गुगल पुस्तक एवं विकिपीडिया की सहायता ली गई है । साथ ही पुस्तकालय का भरपूर उपयोग किया गया है ।

१.९ शोधपत्र की रुपरेखा

प्रथम अध्याय

प्रथम अध्याय में शोध से सम्बन्धित सभी आवश्यक उपकरणों की चर्चा की गई है ।

द्वितीय अध्याय

इस अध्याय में प्रसाद के व्यक्तित्व और रचनाओं पर प्रकाश डाला गया है ।

तृतीय अध्याय

इस अध्याय में छायावाद का परिचय, प्रवृत्तियाँ एवं जयशंकर प्रसाद को छायावादी कवि के रुप में विश्लेषण किया गया है ।

चतुर्थ अध्याय

चतुर्थ अध्याय में प्रसाद रचित कामायनी पर विशद चर्चा की गई है ।

पंचम अध्याय में शोध निष्कर्ष के साथ ही शोधपत्र का उपसंहार और सन्दर्भ पुस्तक सूची के साथ समापन किया गया है ।

द्‌वितीय अध्याय

२.१ जयशंकर प्रसाद जीवनीत्र

जयशंकर प्रसाद हिन्दी कवि, नाटकार, कथाकार, उपन्यासकार तथा निबन्धकार थे । वे हिन्दी के छायावादी युग के चार प्रमुख स्तंभों में से एक हैं । उन्होंने हिंदी काव्य में छायावाद की स्थापना की जिसके द्वारा खड़ी बोली के काव्य में कमनीय माधुर्य की रससिद्ध धारा प्रवाहित हुई और वह काव्य की सिद्ध भाषा बन गई । आधुनिक हिंदी साहित्य के इतिहास में इनके कृतित्व का गौरव अक्षुण्ण है । वे एक युगप्रवर्तक लेखक थे जिन्होंने एक ही साथ कविता, नाटक, कहानी और उपन्यास के क्षेत्र में हिंदी को गौरव करने लायक कृतियाँ दीं। कवि के रूप में वे निराला, पन्त, महादेवी के साथ छायावाद के चौथे स्तंभ के रूप में प्रतिष्ठित हुए है । नाटक लेखन में भारतेंदु के बाद वे एक अलग धारा बहाने वाले युगप्रवर्तक नाटककार रहे जिनके नाटक आज भी पाठक चाव से पढते हैं। इसके अलावा कहानी और उपन्यास के क्षेत्र में भी उन्होंने कई यादगार कृतियाँ दीं। विविध रचनाओं के माध्यम से मानवीय करूणा और भारतीय मनीषा के अनेकानेक गौरवपूर्ण पक्षों का उद्घाटन। ४८ वर्षो के छोटे से जीवन में कविता, कहानी, नाटक, उपन्यास और आलोचनात्मक निबंध आदि विभिन्न विधाओं में रचनाएं की।

२.२ प्रारंभिक जीवन :

जिस समय खड़ी बोली और आधुनिक हिन्दी साहित्य किशोरावस्था में पदार्पण कर रहे थे उस समय जयशंकर प्रसाद का जन्म सन् 1889 ई. (माघ शुक्ल दशमी, संवत् 1946 वि.) वाराणसी, उत्तर प्रदेश में हुआ था। कवि के पितामह शिव रत्न साहु वाराणसी के अत्यन्त प्रतिष्ठित नागरिक थे और एक विशेष प्रकार की सुरती (तम्बाकू) बनाने के कारण 'सुँघनी साहु' के नाम से विख्यात थे। उनकी दानशीलता सर्वविदित थी और उनके यहाँ विद्वानों कलाकारों का समादर होता था। जयशंकर प्रसाद के पिता देवीप्रसाद साहु ने भी अपने पूर्वजों की परम्परा का पालन किया। इस परिवार की गणना वाराणसी के अतिशय समृद्ध घरानों में थी और धन वैभव का कोई अभाव न था। प्रसाद का कुटुम्ब शिव का उपासक था। माता-पिता ने उनके जन्म के लिए अपने इष्टदेव से बड़ी प्रार्थना की थी। वैद्यनाथ धाम

के झारखण्ड से लेकर उज्जयिनी के महाकाल की आराधना के फलस्वरूप पुत्र जन्म स्वीकार कर लेने के कारण शैशव में जयशंकर प्रसाद को 'झारखण्डी' कहकर पुकारा जाता था। वैद्यनाथधाम में ही जयशंकर प्रसाद का नामकरण संस्कार हुआ। जयशंकर प्रसाद की शिक्षा घर पर ही आरम्भ हुई। संस्कृत, हिन्दी, फ़ारसी, उर्दू के लिए शिक्षक नियुक्त थे। इनमें रसमय सिद्ध प्रमुख थे। प्राचीन संस्कृत ग्रन्थों के लिए दीनबन्धु ब्रह्मचारी शिक्षक थे। कुछ समय के बाद स्थानीय क्वीन्स कॉलेज में प्रसाद का नाम लिख दिया गया, पर यहाँ पर वे आठवीं कक्षा तक ही पढ़ सके। प्रसाद एक अध्यवसायी व्यक्ति थे और नियमित रूप से अध्ययन करते थे।

इनके बाल्यकाल में ही इनके पिता जी का देहांत हो गया, किशोरावस्था से पूर्व इनकी माता और बड़े भाई का देहांत हो गया, जिसके कारण 17 वर्ष की उम्र में ही जयशंकर प्रसाद पर अनेक जिम्मेदारियां आ गयी, घर में सहारे के रूप में केवल विधवा भाभी और परिवार से सम्बद्ध अन्य लोगों ने इनकी सम्पत्ति हड़पने का षड्यंत्र रचा, परिणाम स्वरुप इन्होंने विद्यालय की शिक्षा छोड़ दी और घर में ही अंग्रेजी, हिन्दी, बंगला, उर्दू, फारसी, संस्कृत आदि भाषाओं का गहन अध्यन किया, ये साहित्यिक प्रवृति के व्यक्ति थे, शिव के उपासक थे और मांस मदिरा से दूर रहते थे, इन्होंने अपने साहित्य साधना से हिन्दी को अनेक उच्चकोटि के ग्रन्थ रत्न प्रदान किए, इनके गुरुओं में रसमय सिद्ध की भी चर्चा की जाती है । इन्होंने वेद, इतिहास, पुराण व साहित्य का गहन अध्ययन किया था ।

सत्रह वर्ष की अवस्था तक इनके माता पिता एवं ज्येष्ठ भ्राता के देहावसान के कारण गृहस्थी का बोझ आन पड़ा। गृह कलह में सारी समृद्धि जाती रही। इन्ही परिस्थितियों ने प्रसाद के कवि व्यक्तित्व को उभारा। १५ नवम्बर १९३७ को इस महान रचनाकार की लेखनी ने जीवन के साथ विराम ले लिया। 'कामायनी' जैसे महाकाव्य के रचयिता जयशंकर प्रसाद की रचनाओं में अंतर्द्वद्व का जो रूप दिखाई पड़ता है वह इनकी लेखनी का मौलिक गुण है। इनके नाटकों तथा कहानियो में भी यह अंतर्द्वंद्व गहन संवेदना के स्तर पर उपस्थित है। इनकी अधिकांश रचनाएँ इतिहास तथा कल्पना के समन्वय पर आधारित हैं तथा प्रत्येक काल के यथार्थ को गहरे स्तर पर संवेदना की भावभूमि पर प्रस्तुत करती हैं। जयशंकर प्रसाद की रचनाओं में शिल्प के स्तर पर भी मौलिकता के दर्शन होते हैं। उनकी

रचनाओं में भाषा की संस्कृतनिष्ठता तथा प्रांजलता विशिष्ट गुण हैं। चित्रात्मक वस्तु विवरण से संपृक्त उनकी रचनाएँ प्रसाद की अनुभूति और चिंतन के दर्शन कराती हैं।

प्रसाद छायावादी युग के चार प्रमुख स्तंभों में से एक महान लेखक के रूप में प्रख्यात रहे । विविध रचनाओं के माध्यम से मानवीय करूणा और भारतीय मनीषा के अनेकानेक गौरवपूर्ण पक्षों का उद्घाटन आपने किया है । ४८ वर्षो के छोटे से जीवन में कविता, कहानी, नाटक, उपन्यास और आलोचनात्मक निबंध आदि विभिन्न विधाओं में रचनाएँ की। काव्य साहित्य में कामायनी बेजोड कृति है । विविध रचनाओं के माध्यम से मानवीय करूणा और भारतीय मनीषा के अनेकानेक गौरवपूर्ण पक्षों का उद्घाटन करने वाले इस महामानव ने ४८ वर्षो के छोटे से जीवन में कविता, कहानी, नाटक, उपन्यास और आलोचनात्मक निबंध आदि विभिन्न विधाओं में रचनाएं लिख कर हिंदी साहित्य जगत को सवांर सजाया । १४ जनवरी १९३७ को वाराणसी में निधन, हिंदी साहित्याकास में एक अपूर्णीय क्षति थी । हिन्दी साहित्य के इतिहास में कहानी को आधुनिक जगत की विधा बनाने में प्रसाद का योगदान अन्यतम है। बाह्य घटना को आन्तरिक हलचल के प्रतिफल के रूप में देखने की उनकी दृष्टि, जो उनके निबंधों में शैवाद्वैत के सैद्धांतिक आधार के रूप में है, ने कहानी में आन्तरिकता का आयाम प्रदान किया है। जैनेन्द्र ओर अज्ञेय की कहानियों के मूल में प्रसाद के इस आयाम को देखा जा सकता है।

एक महान लेखक के रूप में प्रख्यात जयशंकर प्रसाद के तितली, कंकाल और इरावती जैसे उपन्यास और आकाशदीप, मधुआ और पुरस्कार जैसी कहानियाँ उनके गद्य लेखन की अपूर्व ऊँचाइयाँ हैं। उनकी कहानियां कविता समान रहती है। प्रसाद जी ने अपने नाटकों के माध्यम से भारतीय इतिहास के गौरवपूर्ण चरित्रों को सामने लाते रहे। 'चन्द्रगुप्त' इनका ऐसा ही एक नाटक है। इस नाटक में भी इन्होंने अपने स्वाभावानुसार सुंदर गीतों का समावेश किया है। इन्हीं में से एक गीत 'हिमाद्रि तुंग शृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती' में वे बड़े सुंदर और ओजस्वी ढंग से भारत के वीरों का आह्वान करते हैं।

२.३ प्रसाद की शैली :

प्रसाद ने निबंध लेखन में निम्नलिखित शैलियों का प्रयोग किया है :

१. भावात्मक शैली - प्रसाद जी की रचना प्रक्रिया नाटक से काव्य लेखन की ओर उन्मुख हुई है। इसलिए नाटक संयोजन पात्र योजना, भावात्मक, मनोभावों की अभिव्यक्ति भावात्मक शैली में हुई है।

२. चित्रात्मक शैली - प्रसाद जी ने जहां वस्तुओं, स्थानों और व्यक्तियों के शब्द चित्र में उपस्थित किए हैं वहां उनकी शैली चित्रात्मक हो गई है ।

३. अलंकारिक शैली– हृदय की प्रधानता के कारण प्रसाद के गद्य में भी अलंकारों का सही प्रयोग मिलता है जिसमें अलंकारिक रूप मिलते हैं ।

४. संवाद शैली - प्रसाद के उपन्यास कहानी और नाटकों में संवाद शैली का प्रयोग पात्र अनुकूल किया है ।

५. वर्णनात्मक शैली - विषय वस्तु का प्रतिपादन घटनाओं और वस्तुओं के चित्र में वर्णनात्मक शैली का प्रयोग मिलता है।

प्रसाद की कृतियाँ

काव्य संग्रह :

कामायनी / जयशंकर प्रसाद (महाकाव्य)

आँसू / जयशंकर प्रसाद

झरना / जयशंकर प्रसाद

कानन कुसुम / जयशंकर प्रसाद

लहर / जयशंकर प्रसाद

रचनाएँ :

चित्राधार : जयशंकर प्रसाद

आह ! वेदना मिली विदाई : जयशंकर प्रसाद

बीती विभावरी जाग री : जयशंकर प्रसाद

दो बूँदें : जयशंकर प्रसाद

प्रयाणगीत : जयशंकर प्रसाद

तुम कनक किरन : जयशंकर प्रसाद

भारत महिमा : जयशंकर प्रसाद

अरुण यह मधुमय देश हमारा : जयशंकर प्रसाद

आत्मकथ्य : जयशंकर प्रसाद

सब जीवन बीता जाता है : जयशंकर प्रसाद

हिमाद्रि तुंग शृंग से : जयशंकर प्रसाद

काव्य संग्रह :

'प्रेम पथिक' का ब्रजभाषा स्वरूप सबसे पहले 'इन्दू' (1909 ई.) में प्रकाशित हुआ था

'चित्राधार' 1918, अयोध्या का उद्धार, वनमिलन और प्रेमराज्य तीन कथाकाव्य इसमें संगृहीत हैं।

झरना 1918, छायावादी शैली में रचित कविताएँ इसमें संगृहीत

'कानन कुसुम' 1918, खड़ीबोली की कविताओं का प्रथम संग्रह है

'आँसू' (1925 ई.) 'आँसू' एक श्रेष्ठ गीतिकाव्य है।

'महाराणा का महत्त्व' (1928) 1914 ई. में 'इन्दु' में प्रकाशित हुआ था। यह भी 'चित्राधार' में संकलित था, पर 1928 ई. में इसका स्वतन्त्र प्रकाशन हुआ। इसमें महाराणा प्रताप की कथा है।

लहर (1933, मुक्तक रचनाओं का संग्रह)

कामायनी (1936, महाकाव्य)

नाटक :

सज्जन (1910 ई., महाभारत से)

कल्याणी(परिणय (1912 ई., चन्द्रगुप्त मौर्य, सिल्यूकस, कार्नेलिया, कल्याणी)

करुणालय' (1913, 1928 स्वतंत्र प्रकाशन, गीतिनाट्य, राजा हरिश्चन्द्र की कथा)

इसका प्रथम प्रकाशन 'इन्दु' (1913 ई.) में हुआ।

प्रायश्चित् (1013, जयचन्द, पृथ्वीराज, संयोगिता)

राज्यश्री (1914)

विशाख (1921)

अजातशत्रु (1922)

जनमेजय का नागयज्ञ (1926)

कामना (1927)

स्कन्दगुप्त (1928, विक्रमादित्य, पर्णदत्त, बन्धवर्मा, भीमवर्मा, मातृगुप्त, प्रपंचबुद्धि, शर्वनाग, धातुसेन (कुमारदास), भटार्क, पृथ्वीसेन, खिंगिल, मुद्गल,कुमारगुप्त, अननतदेवी, देवकी, जयमाला, देवसेना, विजया, तमला,रामा,मालिनी, स्कन्दगुप्त)

एक घूँट (1929, बनलता, रसाल, आनन्द, प्रेमलता)

चन्द्रगुप्त (1931, चाणक्य, चन्द्रगुप्त, सिकन्दर, पर्वतेश्वर, सिंहरण, आम्भीक, अलका, कल्याणी, कार्नेलिया, मालविका, शकटार)

ध्रुवस्वामिनी (1933, चन्द्रगुप्त, रामगुप्त, शिखरस्वामी, पुरोहित, शकराज, खिंगिल, मिहिरदेव, ध्रुवस्वामिनी, मंदाकिनी, कोमा)

तृतीय अध्याय

छायावाद की प्रवृत्तियां

छायावादी काव्य का विश्लेषण करने पर हम उसमें निम्नांकित प्रवृत्तियां पाते हैं :

१. **वैयक्तिकता** : छायावादी काव्य में वैयक्तिकता का प्राधान्य है। कविता वैयक्तिक चिंतन और अनुभूति की परिधि में सीमित होने के कारण अंतर्मुखी हो गई, कवि के अहम् भाव में निबद्ध हो गई। कवियों ने काव्य में अपने सुख-दुख,उतार-चढ़ाव,आशा-निराशा की अभिव्यक्ति खुल कर की। उसने समग्र वस्तुजगत को अपनी भावनाओं में रंग कर देखा। जयशंकर प्रसाद का'आंसू' तथा सुमित्रा नंदन पंत के 'उच्छवास' और 'आंसू' व्यक्तिवादी अभिव्यक्ति के सुंदर निदर्शन हैं। इसके व्यक्तिवाद के स्व में सर्व सन्निहित है। डा'. शिवदान सिंह चौहान इस संबंध में अत्यंत मार्मिक शब्दों में लिखते हैं "कवि का मैं प्रत्येक प्रबुद्ध भारतवासी का मैं था,इस कारण कवि ने विषयगत दृष्टि से अपनी सूक्ष्मातिसूक्ष्म अनुभूतियों को व्यक्त करने के लिए जो लाक्षणिक भाषा और अप्रस्तुत रचना शैली अपनाई,उसके संकेत और प्रतीक हर व्यक्ति के लिए सहज प्रेषणीय बन सके।''छायावादी कवियों की भावनाएं यदि उनके विशिष्ट वैयक्तिक दुखों के रोने धोने तक ही सीमित रहती,उनके भाव यदि केवल आत्मकेंद्रित ही होते तो उनमें इतनी व्यापक प्रेषणीयता कदापि न आ पाती । निराला ने लिखा है :

मैंने मैं शैली अपनाई,
देखा एक दुखी निज भाई
दुख की छाया पड़ी हृदय में
झट उमड़ वेदना आई

इससे स्पष्ट है कि व्यक्तिगत सुख दुख की अपेक्षा अपने से अन्य के सुख दुख की अनूभूति ने ही नए कवियों के भाव प्रवण और कल्पनाशील हृदयों को स्वच्छंदतावाद की ओर प्रवृत्त किया।

२. **प्रकृति सौंदर्य और प्रेम की व्यंजना :** छायावादी कवि का मन प्रकृति चित्रण में खूब रमा है और प्रकृति के सौंदर्य और प्रेम की व्यंजना छायावादी कविता की एक प्रमुख विशेषता रही है। छायावादी कवियों ने प्रकृति को काव्य में सजीव बना दिया है। प्रकृति सौंदर्य और प्रेम की अत्यधिक व्यंजना के कारण ही डॉ. देवराज ने छायावादी काव्य को 'प्रकृति काव्य' कहा है। छायावादी काव्य में प्रकृति-सौंदर्य के अनेक चित्रण मिलते हैं, जैसे १. आलम्बन रूप में प्रकृति चित्रण २.उद्दीपन रूप में प्रकृति चित्रण ३.प्रकृति का मानवीकरण ४.नारी रूप में प्रकृति के सौंदर्य का वर्णन ५.आलंकारिक चित्रण ६.प्रकृति का वातावरण और पृष्ठभूमि के रूप में चित्रण ७. रहस्यात्मक अभिव्यक्ति के साधन के रूप में चित्रण।

प्रसाद,पंत,निराला,महादेवी आदि छायावाद के सभी प्रमुख कवियों ने प्रकृति का नारी रूप में चित्रण किया और सौंदर्य व प्रेम की अभिव्यक्ति की। पंत की कविता का एक उदाहरण देखिए :

बांसों का झुरमुट
संध्या का झुटपुट
हैं चहक रहीं चिड़ियां
टी वी टी टुट् टुट्

छायावादी कवि के लिए प्रकृति की प्रत्येक छवि विस्मयोत्पादक बन जाती है। वह प्राकृतिक सौंदर्य पर विमुग्ध होकर रहस्यात्मकता की ओर उन्मुख हो जाता है :

मैं भूल गया सीमाएं जिससे
वह छवि मिल गई मुझे

छायावादी कवि ने निजी अनुभूतियों का व्यक्तिकरण प्रकृति के माध्यम से किया है, जैसे :

मैं नीर भरी दुख की बदली

छायावादी कवि सौंदर्यानुभूति से अभिभूत है। अपने आंतरिक सौंदर्य का उद्घाटन प्रकृति के माध्यम से करता हुआ दिखाई पड़ता है :

शशि मुख पर घूंघट डाले,अंचल में दीप छिपाए
जीवन की गोधूलि में,कौतूहल से तुम आए ...प्रसाद

अधिकांश छायावादी कवियों ने प्रकृति के कोमल रूप का चित्रण किया है,परंतु कहीं-कहीं उसके उग्र रूप का चित्रण भी हुआ है।

३. **शृंगारिकता** : छायावादी काव्य में शृंगार-भावना की प्रधानता है,परंतु यह शृंगार रीतिकालीन स्थूल एवं ऐन्द्रिय शृंगार से भिन्न है। छायावादी शृंगार-भावना मानसिक एवं अतीन्द्रिय है। यह शृंगार-भावना दो रूपों में अभिव्यक्त हुई है । १. नारी के अतीन्द्रिय सौंदर्य चित्रण द्वारा २. प्रकृति पर नारी-भावना के आरोप के माध्यम से। पंत और प्रसाद ने अछूती कल्पनाओं की तूलिका से नारी के सौंदर्य का चित्रण किया है। एक उदाहरण देखिए–

तुम्हारे छूने में था प्राण
संग में पावन गंगा स्नान
तुम्हारी वाणी में कल्याणी
त्रिवेणी की लहरों का गान

नारी का अतीन्द्रिय सौंदर्य चित्रण प्रसाद जी द्वारा श्रद्धा के सौंदर्य में द्रष्टव्य है–

नील परिधान बीच सुकुमार,
खुल रहा मृदुल अधखुला अंग।
खिला हो ज्यों बिजली का फूल,
मेघवन बीच गुलाबी रंग।

निराला की 'जुही की कली' कविता में दूसरे प्रकार की शृंगार-भावना का चित्र है। प्रसाद ने 'कामायनी' में सौंदर्य को चेतना का उज्ज्वल वरदान माना है। इस प्रकार छायावादी शृंगार-भावना और उसके सभी उपकरणों(नारी,सौंदर्य,प्रेम) का चित्रण सूक्ष्म एवं उदात्त है। उसमें वासना की गंध बहुत कम है।

छायावादी कवि को प्रेम के क्षेत्र में जाति,वर्ण,सामाजिक रीति-नीति,रुढ़ियां और मिथ्या मान्यताएं मान्य नहीं हैं, निराला जी लिखते हैं :

दोनों हम भिन्न वर्ण, भिन्न जाति, भिन्न रूप।
भिन्न धर्म भाव, पर केवल अपनाव से प्राणों से एक थे॥

इनके प्रेम चित्रण में कोई लुकाव-छिपाव-दुराव नहीं है। उसमें कवि की वैयक्तिकता है। इनकी प्रणय गाथा का अंत प्रायः दुख,निराशा तथा असफलता में होता है। अतः उसमें मिलन की अनुभूतियों की अपेक्षा विरहानुभूतियों का चित्रण अधिक हुआ है और इस दिशा में उन्हें आशातीत सफलता भी मिली। पंत के शब्दों में–

शून्य जीवन के अकेले पृष्ठ पर
विरह अहह कराहते इस शब्द को
किसी कुलिश की तीक्ष्ण चुभती नोंक से
निठुर विधि ने आंसुओं से है लिखा

४. **रहस्यानुभूति** : छायावादी कवि को अज्ञात सत्ता के प्रति एक विशेष आकर्षण रहा है। वह प्रकृति के प्रत्येक पदार्थ में इसी सत्ता के दर्शन करता है। उसका इस अंनत के प्रति प्रमुख रूप से विस्मय तथा जिज्ञासा का भाव है। लेकिन उनका रहस्य जिज्ञासामूलक है, उसे कबीर और दादू के रहस्यवाद के समक्ष खड़ा नहीं किया जा सकता।निराला तत्व ज्ञान के कारण, तो पंत प्राकृतिक सौंदर्य से रहस्योन्मुख हुए। प्रेम और वेदना ने महादेवी को रहस्योन्मुख किया तो प्रसाद ने उस परमसत्ता को अपने बाहर देखा। यद्यपि महादेवी में अवश्य ही रहस्य(साधना की दृढ़ता दिखाई पड़ती है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल के शब्दों में, "कवि उस अनंत अज्ञात प्रियतम को आलंबन बनाकर अत्यंत चित्रमयी भाषा में प्रेम की अनेक प्रकार से अभिव्यंजना करते हैं। ...तथा छायावाद का एक अर्थ रहस्यवाद भी है। अतः सुधी आलोचक रहस्यवाद को छायावाद का प्राण मानते हैं ।''छायावादी कवियों की कुछ रहस्य अनुभूतियों के उदाहरण देखिए–

हे अनंत रमणीय कौन तुम!
यह मैं कैसे कह सकता!
कैसे हो,क्या हो इसका तो
भार विचार न सह सकता? प्रसाद

प्रिय चिरन्तन है सजनि
क्षण क्षण नवीन सुहागिनी मैं
तुम मुझ में फिर परिचय क्या! महादेवी

प्रथम रश्मि का आना रंगिणि

तुने कैसे पहचाना ? पंत

किस अनंत का नीला अंचल हिला(हिलाकर आती तुम सजी मंडलाकर निराला

तृणवीरुध लहलहे हो किसके रस से सिंचे हुए प्रसाद

तोड़ दो यह क्षितिज मैं भी देख लूं उस ओर क्या है महादेवी

५. **तत्त्व चिंतन** : छायावादी कविता में अद्वैत-दर्शन,योग-दर्शन,विशिष्टाद्वैत-दर्शन,आनंदवाद आदि के अंतर्गत दार्शनिक चिंतन भी मिलता है। प्रसाद का मूल दर्शन आनंदवाद है तो महादेवी ने अद्वैत,सांख्य एवं योग दर्शन का विवेचन अपने ढ़ग से किया है।

६. **वेदना और करुणा की विवृत्ति** : छायावादी कविता में वेदना की अभिव्यक्ति करुणा और निराशा के रूप में हुई है। हर्ष-शोक,हास-रुदन, जन्म-मरण,विरह-मिलन आदि से उत्पन्न विषमताओं से घिरे हुए मानव-जीवन को देखकर कवि हृदय में वेदना और करुणा उमड़ पड़ती है।जीवन में मानव-मन की आकांक्षाओं और अभिलाषाओं की असफलता पर कवि-हृदय क्रन्दन करने लगता है। छायावादी कवि सौंदर्य प्रेमी होता है,किंतु सौंदर्य की क्षणभंगुरता को देख उसका हृदय आकुल हो उठता है। हृदयगत भावों की अभिव्यक्ति की अपूर्णता,अभिलाषाओं की विफलता,सौंदर्य की नश्वरता, प्रेयसी की निष्ठुरता, मानवीय दुर्बलताओं के प्रति संवेदनशीलता और प्रकृति की रहस्यमयता आदि अनेक कारणों से छायावादी कवि के काव्य में वेदना और करुणा की अधिकता पाई जाती है। प्रसाद ने "आंसू" में वेदना को साकार रूप दिया है। पंत तो काव्य की उत्पत्ति ही वेदना को मानते हैं –

वियोगी होगा पहला कवि, आह से निकला होगा गान।

उमड़ कर आंखों से चुपचाप, बही होगी कविता अजान॥

महादेवी तो पीड़ा में ही अपने प्रिय को ढूंढ़ती हैं (

तुमको पीड़ा में ढूंढ़ा, तुममें ढूंढूंगी पीड़ा।

और पंत जी कहते हैं –

चिर पूर्ण नहीं कुछ जीवन में

अस्थिर है रूप जगत का मद ।

संसार में दुख और वेदना को देखकर छायावादी कवि पलायनवादी भी हुआ। वह इस संसार से ऊब चुका है और कहीं ओर चला जाना चाहता है। इसका मुख्य कारण यह है कि वह इस संसार में दुख ही दुख देखता है, यहां सर्वत्र सुख का अभाव दृष्टिगोचर होता है। इस विषय में कवि पंत की अभिव्यक्ति द्रष्टव्य है :

यहां सुख सरसों,शोक सुमेरु
अरे जग है जग का कंकाल
वृथा रे,यह अरण्य चीत्कार
शांति,सुख है उस पार

निराला भी जग के उस पार जाना चाहते हैं। प्रसाद भी अत्यंत प्रसिद्ध गीत में नाविक से इस कोलाहलपूर्ण संसार से दूर चलने का अनुरोध करते हैं।

७. **मानवतावादी दृष्टिकोण** : छायावादी काव्य भारतीय सर्वात्मवाद तथा अद्वैतवाद से गहरे रूप से प्रभावित हुआ। इस काव्य पर रामकृष्ण परमहंस,विवेकानंद,गांधी,टैगोर तथा अरविंद के दर्शन का भी काफी प्रभाव रहा।स्वच्छंदतावादी प्रवृत्ति के कारण छायावादी कवि को साहित्य के समान धर्म,दर्शन आदि में भी रुढ़ियों एवं मिथ्या परम्पराएं मान्य नहीं हैं। रविंद्रनाथ ठाकुर,जो बंगला साहित्य में मानवतावाद का उद्घोष पहले ही कर चुके थे, का प्रभाव छायावादी कवियों पर भी रहा।छायावादी कवि सारे संसार से प्रेम करता है। उसके लिए भारतीय और अभारतीय में कोई भेद नहीं क्योंकि सर्वत्र एक ही आत्मा व्याप्त है। विश्वमानवता की प्रतिष्ठा उसका आदर्श है।

८. **नारी के प्रति नवीन दृष्टिकोण** : नारी के प्रति छायावाद ने सर्वथा नवीन दृष्टिकोण अपनाया है। यहां नारी वासना की पूर्ति का साधन नहीं है,यहां तो वह प्रेयसी,जीवन-सहचरी,मां आदि विविध रूपों में उतरी है। उसका मुख्य रूप प्रेयसी का ही रहा है। यह प्रेयसी पार्थिव जगत की स्थूल नारी नहीं है,वरन कल्पना लोक की सुकुमारी देवी है। नारी के संबंध में प्रसाद जी कहते हैं–

नारी तुम केवल श्रद्धा हो
विश्वास-रजत-नग-पगतल में
पीयूष-स्रोत सी बहा करो

जीवन के सुंदर समतल में

छायावादी कवि ने युग-युग से उपेक्षित नारी को सदियों की कारा से मुक्त करने का स्वर अलापा। छायावादी कवि कह उठता है – "मुक्त करो नारी को,युग-युग की कारा से बंदिनी नारी को।"

निसंदेह छायावाद ने नारी को मानवीय सहृदयता के साथ अंकित किया है। पंत की प्रसिद्ध पंक्ति है ("देवि मां सहचरि प्राण" प्रसाद ने नारी को आदर्श श्रद्धा के रूप में देखा जो रागात्मक वृत्ति की प्रतीक है और मनुष्य को मंगल एवं श्रेय के पथ पर ले जाने वाली है। निराला नारी की यथार्थ स्थिति को काफी पहचान कर उसे चित्रित करते हैं। उन्होंने विधवा को इष्ट देव के मंदिर की पूजा कहा। इलाहाबाद के पथ पर तोड़ती हुई मजदूरनी का चित्र खिंचा, तुलसी की पत्नी रत्नावली का चित्रण रीतिकालीन नारी विषयक धारणा को तोड़नेवाली के रूप में किया।

९. **आदर्शवाद** : छायावाद में आंतरिकता की प्रवृत्ति की प्रधानता है। उसमें चीजों के बाह्य स्थूल रूप चित्रण की प्रवृत्ति नहीं है। अपनी इस अंतर्मुखी प्रवृत्ति के कारण उनका दृष्टिकोण काव्य के भावजगत और शैली में आदर्शवादी रहा। उसे स्थूलता के चित्रण की बजाय अपनी अनुभूतियां अधिक यथार्थ लगी हैं। यही कारण है कि उसका काव्य संबंधी दृष्टिकोण कल्पनात्मक रहा और उसमें सुंदर तत्त्व की प्रधानता बनी रही। छायावादी कवि के इस आदर्शवादी, कल्पनात्मक दृष्टिकोण को उसके कला पक्ष में भी सहज ही देखा जा सकता है।

१०. **स्वच्छंदतावाद** : छायावादी कवि ने अहंवादी होने के कारण विषय,भाव,कला,धर्म,दर्शन और समाज के सभी क्षेत्रों में स्वछंदतावादी प्रवृत्ति को अपनाया। उसे अपने हृदयोदगार को अभिव्यक्त करने के लिए किसी प्रकार का शास्त्रीय बंधन और रुढ़ियां स्वीकार नहीं हैं। भाव-क्षेत्र में भी उसने इसी क्रांति का प्रदर्शन किया। उसमें 'मैं' की शैली अपनाई, हालांकि उसके 'मैं' में समूचा समाज सन्निहित है। अब छायावादी कवि के लिए प्रत्येक क्षेत्र और प्रत्येक दिशा का मार्ग उन्मुक्त था। छायावादी कवि के लिए कोई भी वस्तु काव्यविषय बनने के लिए उपयुक्त थी। इसी स्वच्छंदतावादी प्रवृत्ति के फलस्वरूप छायावादी काव्य में सौंदर्य

और प्रेम चित्रण, प्रकृति-चित्रण,राष्ट्रप्रेम,रहस्यात्मकता,वेदना और करुणा, वैयक्तिक सुख-दुख, अतीत प्रेम, कलावाद,प्रतीकात्मकता और लाक्षणिकता,अभिव्यंजना आदि सभी प्रवृत्तियां मिलती है। उसे पुरानी पिटी पिटाई राहों पर चलना अभिप्रेत नहीं है।संक्षेप में कह सकते हैं कि छायावाद वैयक्तिक रुचि स्वातंर्त्य का युग है।

११. **देशप्रेम एवं राष्ट्रीय भावना** : राष्ट्रीय जागरण की क्रोड़ में पलने पनपने वाला स्वच्छंदतावादी छायावाद साहित्य यदि रहस्यात्मकता और राष्ट्र प्रेम की भावनाओं को साथ साथ लेकर चला है, तो इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है। सच तो यह है कि राष्ट्रीय जागरण ने छायावाद के व्यक्तिवाद को असामाजिक पथों पर भटकने से बचा लिया। छायावादी कवि में आंतरिकता की कितनी भी प्रधानता क्यों न हो वह अपने युग से निश्चित रूप से प्रभावित हुआ। यही कारण है कि जयशंकर प्रसाद पुकार उठते हैं –

अरुण यह मधुमय देश हमारा ...

या

हिमाद्रि तुंग शृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती

माखन लाल चतुर्वेदी कह उठते हैं (

मुझे तोड़ लेना वनमाली

उस पथ पर तुम देना फेंक।

मातृभूमि पर शीश चढ़ाने

जिस पथ जावें वीर अनेक।

१२. **प्रतीकात्मकता** : प्रतीकात्मकता छायावादियों के काव्य की कला पक्ष की प्रमुख विशेषता है। प्रकृति पर सर्वत्र मानवीय भावनाओं का आरोप किया गया और उसका संवेदनात्मक रूप में चित्रण किया गया,इससे यह स्वतंत्र अस्तित्व और व्यक्तित्व से विहीन हो गई और उसमें प्रतीकात्मकता का व्यवहार किया गया। उदाहरणार्थ, फूल सुख के अर्थ में,शूल दुख के अर्थ में,उषा प्रफुल्लता के अर्थ में,संध्या उदासी के अर्थ में,झंझा(झकोर गर्जन मानसिक द्वन्द्व के अर्थ में,नीरद माला नाना भावनाओं के अर्थ में प्रयुक्त हुए।दार्शनिक अनुभूतियों की अभिव्यंजना एवं प्रेम की सूक्ष्मातिसूक्ष्म दशाओं के अंकन में भी इस प्रतीकात्मकता को देखा जा सकता है।

१३. **चित्रात्मक भाषा एवं लाक्षणिक पदावली :** अन्य अनुपम विशिष्टताओं के अतिरिक्त केवल चित्रात्मक भाषा के कारण हिंदी वाङ्मय में छायावादी काव्य को स्वतंत्र काव्य धारा माना जा सकता है।कविता के लिए चित्रात्मक भाषा की अपेक्षा की जाती है और इसी गुण के कारण उसमें बिम्बग्राहिता आती है। छायावादी कवि इस कला में परम विदग्ध हैं।"छायावादी काव्य में प्रसाद ने यदि प्रकृति तत्त्व को मिलाया, निराला ने उसे मुक्तक छंद दिया,पंत ने शब्दों को खराद पर चढ़ाकर सुड़ौल और सरस बनाया तो महादेवी ने उसमें प्राण डाले,उसकी भावात्मकता को समृद्ध किया।"प्रसाद की निम्नांकित पंक्तियों में भाषा की चित्रात्मकता की छटा देखते ही बनती है :

शशि मुख पर घूंघट डाले,अंचल में दीप छिपाए।
जीवन की गोधूलि में,कौतूहल से तुम आए।

छायावादी कवि ने सीधी सादी भाव संबंधित भाषा से लेकर लाक्षणिक और अप्रस्तुत विधानों से युक्त चित्रमयी भाषा तक का प्रयोग किया और कदाचित इस क्षेत्र में उसने सर्वाधिक मौलिकता का प्रदर्शन किया। छायावादी कवि ने परम्परा प्राप्त उपमानों से संतुष्ट न होकर नवीन उपमानों की उद्भावना की। इसमें अप्रस्तुत विधान और अभिव्यंजना शैली में शतशः नवीन प्रयोग किए। मूर्त में अमूर्त का विधान उसकी कला का विशेष अंग बना। निराला जी विधवा का चित्रण करते हुए लिखते हैं – "वह इष्टदेव के मंदिर की पूजा सी"। यही कारण है कि छायावादी काव्यधारा के पर्याप्त विरुद्ध लिखने वाले आलोचक रामचंद्र शुक्ल को भी लिखना पड़ गया कि "छायावाद की शाखा के भीतर धीरे-धीरे काव्य शैली का बहुत अच्छा विकास हुआ,इसमें संदेह नहीं।" इसमें भावावेश की आकुल व्यंजना, लाक्षणिक वैचित्र्य,मूर्त प्रत्यक्षीकरण,भाषा की वक्रता,विरोध चमत्कार,कोमल पद विन्यास इत्यादि काव्य का स्वरूप संगठित करने वाली प्रचुर सामग्री दिखाई पड़ी। उन्होंने पंत काव्य के कुछ उदाहरण भी उपन्यस्त किए –"धूल की ढ़ेरी में अनजान। छिपे हैं मेरे मधुमय गान।मर्म पीड़ा के हास। कौन तुम अतुल अरूप अनाम।"

१४. **गेयता :** छायावादी कवि केवल साहित्यिक ही नहीं वरन संगीत का भी कुशल ज्ञाता है। छायावाद का काव्य छंद और संगीत दोनों दृष्टियों से उच्च कोटि का है। इसमें प्राचीन छंदों के प्रयोग के साथ(साथ नवीन छंदों का भी निर्माण किया गया। इसमें

मुक्तक छंद और अतुकांत कविताएं भी लिखी गई। छायावादी कवि प्रणय,यौवन और सौंदर्य का कवि है। गीति शैली उसके गृहीत विषय के लिए उपयुक्त थी। गीति(काव्य के सभी गुण संक्षिप्तता,तीव्रता,आत्माभिव्यंजना,भाषा की मसृणता आदि उपलब्ध होते हैं।गीति(काव्य के लिए सौंदर्य वृत्ति और स्वानुभूति के गुणों का होना आवश्यक है, सौभाग्य से सारी बातें छायावादी कवियों में मिलती हैं।दूसरी एक और बात भी है कि आधुनिक युग गीति काव्य के लिए जितना उपयुक्त है उतना प्रबंध काव्यों के लिए नहीं। छायावादी साहित्य में, प्रगीत,खंड काव्य और प्रबंध काव्य भी लिखे गए और वीर गीति,संबोध गीति, शोकगीति,व्यंग्य गीति आदि काव्य के अन्य रूप विधानों का प्रयोग किया गया। छायावादी कवियों की भाषा और छंद केवल बुद्धिविलास,वचन भंगिमा,कौशल या कौतुक वृत्ति से प्रेरित नहीं रहा बल्कि उनकी कविता में भाषा भावों का अनुसरण करती दीखती है और अभिव्यंजना अनुभूति का।

१५. **अलंकार-विधान** : अलंकार योजना में प्राचीन अलंकारों के अतिरिक्त अंग्रेजी साहित्य के दो नवीन अलंकारों मानवीकरण तथा विशेषणविपर्यय का भी अच्छा उपयोग किया गया है।प्राकृतिक घटनाओं प्रातस्,संध्या,झंझा,बादल और प्राकृतिक चीजों सूर्य,चंद्रमा आदि पर जहां मानवीय भावनाओं का आरोप किया गया है वहां मानवीकरण है। विशेषण विपर्यय में विशेषण का जो स्थान अभिधावृत्ति के अनुसार निश्चित है,उसे हटाकर लक्षणा द्वारा दूसरी जगह आरोप किया जाता है।पंत ने बच्चों के तुतले भय का प्रयोग उनकी तुतली बोली में व्यंजित भय के लिए किया है। इसी प्रकार" तुम्हारी आंखों का बचपन खेलता जब अल्हड़ खेल।" छायावादी कवि ने अमूर्त को मूर्त और मूर्त को अमूर्त रूप में चित्रित करने के लिए अनेक नवीन उपमानों की उद्भावना की हैस जैसे – "कीर्ति किरण सी नाच रही है" तथा "बिखरी अलकें ज्यों तर्क जाल।" इसके अतिरिक्त उपमा, रूपक, उल्लेख, संदेह, विरोधाभास, रूपकातिशयोक्ति तथा व्यतिरेक आदि अलंकारों का भी सुंदर प्रयोग किया गया है।

१६. **कला कला के लिए** : स्वातन्त्र्य तथा आत्माभिव्यक्ति के अधिकार की भावना के परिणामस्वरूप छायावादी काव्य में "कला कला के लिए" के सिद्धांत का अनुपालन रहा है। वस्तु चयन तथा उसके प्रदर्शन कार्य में कवि ने पूर्ण स्वतंत्रता से काम

लिया है। उसे समाज तथा उसकी नैतिकता की तनिक भी चिंता नहीं है। यही कारण है कि उसके काव्य में 'सत्' और 'शिव' की अपेक्षा 'सुंदर' की प्रधानता रही है। छायावादी काव्य इस "कला कला के लिए" के सिद्धांत में पलायन और प्रगति दोनों सन्निहित हैं। एक ओर अंतर्मुखी प्रवृत्ति के कारण जहां जन(जीवन से कुछ उदासीनता है तो दूसरी ओर काव्य और समाज में मिथ्या रूढ़ियों के प्रति सबल विद्रोह भी। अतः छायावाद पर केवल पलायनवाद का दोष लगाना न्याय संगत नहीं होगा।

अंततः डॉ. नगेन्द्र ने इस साहित्य की समृद्धि की समता भक्ति साहित्य से की है। "इस तथ्य से कतई इनकार नहीं किया जा सकता कि भाषा,भावना एवं अभिव्यक्ति-शिल्प की समृद्धि की दृष्टि से छायावादी काव्य अजोड़ है। विशुद्ध अनुभूतिपरक कवित्वमयता की दृष्टि से भी इसकी तुलना अन्य किसी युग के साहित्य से नहीं की जा सकती।इस दृष्टि से भक्ति काल के बाद आधुनिक काल का यह तृतीय चरण हिंदी साहित्य के इतिहास का दूसरा स्वर्ण युग कहकर रेखांकित किया जा सकता है।इस कविता का गौरव अक्षय है,उसकी समृद्धि की समता केवल भक्ति काव्य ही कर सकता है।"

३.१ जयशंकर प्रसाद और छायावाद

सन 1918 में प्रकाशित जयशंकर प्रसाद के काव्य 'झरना से ' हिन्दी साहित्य में छायावाद का प्रादुर्भाव हुआ । यह प्रसाद के यौवन काल की रचना है और इसकी कविताएं 1914-17 ई० के बीच रची गयी हैं । कवि की प्रारंभिक रचना होने पर भी इसे छायावाद की प्रयोगशाला का प्रथम आविष्कार कहा जाता है । 'दृग जल सा ढला' प्रसाद का यह झरना अपने परिवेश में ऐसी उर्वर, प्रवाहमयी गहन अनुभूति और प्रतीकात्मक शिल्प को लेकर चला कि छायावाद के गहन सागर में 'लहर' सी आ गयी । ध्यातव्य है की 'लहर' जयशंकर प्रसाद का द्वितीय गीतिकाव्य है जिसमे छायावादी प्रवृत्तियों का भरपूर विकास 'ले चल मुझे भुलावा देकर मेरे नाविक धीरे धीरे ' जैसे गीतों में हुआ है । प्रसाद ने अपने 'आंसू' और 'कामायनी' प्रभृति काव्यो में खड़ी बोली की जो कमनीय, मधुर रसधारा प्रवाहित की वह काव्य की सिद्ध भाषा बन गई । परिणामस्वरुप वे छायावाद के प्रतिष्ठापक ही नहीं अपितु छायावादी पद्धति पर सरस संगीतमय गीतों के लिखने वाले श्रेष्ठ कवि भी बने।

छायावाद कोई ऐसी वस्तु नहीं है जिसे एक परिभाषा मे बाँध दिया जाय . अंगरेजी साहित्य के romanticism का जो प्रभाव बंग साहित्य से होकर हिन्दी मे आया और उससे हिन्दी साहित्य में जो स्वछंददतावादी काव्यधारा में प्रवाहित हुई उसे मुकुटमणि पाण्डेय ने 'छायावाद' का अभिधान दिया । भावों के इस स्वछंद प्रभाव से हिन्दी काव्य में अनेक नवीन प्रवृत्तियां विकसित हुयी जिनका समग्र रूप छायावाद कहा जाता है । इन प्रवृत्तियों के आईने मे प्रसाद की रचनाओ को देखने से उनके छायावादी स्वरुप का पता चलता है । मसलन प्रसाद के काव्य में वैयक्तिक चिंतन का प्राधान्य है जो कवि को अंतर्मुखी भी बनाता है । प्रसाद का 'आंसू' काव्य इसका अन्यतम उदहारण है । वे स्वयं अपनी व्यक्तिगत पीड़ा का स्वीकार करते है -

जो घनीभूत पीड़ा थी मस्तक में स्मृति सी छाई
दुर्दिन में आंसू बनकर वह आज बरसने आयी

छायावाद की दूसरी प्रमुख प्रवृत्ति है प्रकृति सौन्दर्य और प्रेम की व्यंजना । जयशंकर प्रसाद ने अपने काव्यो में प्रकृति को आलम्बन और उद्दीपनके रूप में तो दिखाया ही उसका मानवीकरण भी किया और एक नारी के रूप में भी देखा । मानव के आंतरिक सौन्दर्य की परख भी प्रसाद ने प्रकृति के उपादानों में ही की । आंसू काव्य का एक उदाहरण प्रस्तुत है -

शशि मुख पर घूँघट डाले अंचल में दीप छिपाए
जीवन की गोधूली में कौतूहल से तुम आये

प्रसाद ने नारी के सौन्दर्य का बड़ा ही मर्यादित वर्णन किया है जो छायावाद की एक और विशेषता है । रीतिकाल में नारी सौन्दर्य का अत्युक्तिपूर्ण मांसल और भदेस वर्णन हुआ है पर छायावादी कवियों ने नारी को उचित सम्मान दिया । 'कामायनी' मे प्रसाद ने नायिका श्रृद्धा का जो सौन्दर्य वर्णन किया है उसका मार्दव देखते ही बनता है । यथा -

नील परिधान बीच सुकुमार खुल रहा मृदुल अधखुला अंग
किला ही ज्यों बिजली का फूल मेघ वन बीच गुलाबी रंग

इसी प्रकार छायावाद की अन्य प्रवृत्तियाँ जैसे : रहस्यानुभूति, तत्व चिंतन , वेदना और करुणा की विवृति, मानवतावाद, नारी के प्रति नवीन दृष्टिकोण, आदर्शवाद, स्वच्छन्दतावाद, राष्ट्रीयता और देशप्रेम. प्रतीकात्मकता, चित्रात्मकता, बिम्ब विधान,

विशेषण विपर्यय आदि भी प्रसाद के काव्य में मिलते है, जिनके कारण यह प्रांजल रूप से कहा जा सकता है कि प्रसाद न केवल छायावाद के प्रवर्त्तक कवि है अपितु वे इस विधा में अप्रतिम भी हैं । इन मान दण्डों पर प्रसाद के काव्य का अनुशीलन करे तो अकेले 'कामायनी' ही सभी लक्षणों पर भारी है । रहस्यवाद की जैसी निष्पत्ति इस काव्य में हुयी है वह पन्त के 'मौन निमंत्रण' से कही आगे है । सम्पूर्ण सृष्टि किसके संकेतों पर चल रही है । ग्रह और नक्षत्र किसका संधान कर रहे हैं । वह कौन है जिसकी सत्ता सबने स्वीकारी है । 'कामायनी' में कथा नायक मनु के समक्ष ऐसे अनेक प्रश्न है । यह रहस्यानुभूति उन्हें विचलित भी करती है । यथा :

महानील इस परम व्योम में, अन्तरिक्ष में ज्योतिर्मान
गृह नक्षत्र और विद्युत्कण किसका करते थे संधान
छिप जाते है और निकलते आकर्षण में खींचे हुए
तृण वीरुध लहलहे हो रहे किसके रस से सिंचे हुए
सर नीचा कर किसकी सत्ता सब करते स्वीकार यहाँ
सदा मौन हो प्रवचन करते जिसका वह अस्तित्व कहाँ?

'कामायनी' के बारे में तो सभी जानते है के यह शैव संप्रदाय के प्रख्यात प्रत्यभिज्ञा दर्शन पर आधारित काव्य है । अतः तत्व चिंतन तो इसका मूल विषय ही है । आत्मा. माया, पुरुष, प्रकृति , जगत, नियति के साथ ही और अनेक दार्शनिक चिंतन इस काव्य में प्रचुरता से मिलते हैं, शिवतत्व को प्रसाद ने 'चिति' अथवा 'महाचिति' के रूप में दर्शाया है । इस प्रकार त्तात्विक विवेचन जो छायावाद के एक अंग माना गया है, उसमे भी प्रसाद अग्रगण्य है, क्योंकि कामायनी जैसा दार्शनिक चिंतन पूरे हिन्दी साहित्य में दुर्लभ है । शिवतत्व को कामायनी में इस प्रकार दर्शाया गया है :

– कर रही लीलामय आनंद महाचिति सजग हुई.सी व्यक्त ।
विश्व का उन्मीलन अभिराम इसी में सब होते अनुरक्त ।
– अपने दुख सुख से पुलकित यह मूर्त विश्व सचराचर
चिति का विराट वपु मंगल यह सत्य सतत चित सुंदर।

छायावाद के अंतर्गत करुण और वेदना की विवृति पर विचार करे तो प्रसाद के प्रत्येक काव्य में पीड़ा का बड़ा ही मर्मान्तक समाहार हुआ है । 'आंसू' काव्य तो संभवतः इसका

अन्यतम उदाहरण है ही जो हिन्दी साहित्य जगत में मानव के अंतर की घनीभूत पीड़ा का पर्याय माना जाता है। एक उदाहरण देखिये -

रो रोकर सिसक कर कहता मैं करुण कहानी
तुम सुमन नोचते सुनते करते जानी अनजानी

प्रसाद की 'कामायनी' आधुनिक लालसाओं और कामनाओं कसे उत्पन्न विकृति की सच्ची आलोचना है, भौतिक विकास संसार को समप्ति की और ले जा रहा है। यह समाप्ति किसी भी रूप में हो सकती है : जल प्रलय के रूप में । कामायनी का तो प्रारम्भ ही भौतिकतावाद की परिणामी सृष्टि विनाश की परवर्ती स्थितियों से होता है। कामायनी में मनु से मानव की उत्पत्ति दिखाकर प्रकृति ने मानो मानवतावाद को ही जन्मदिया है जो मनुष्य और प्रकृति के रागात्मक सम्बन्धो एवं अनुभूतियों से अधिकाधिक पुष्ट हुआ है।

मधुमय बसंत से जीवन के बह अंतरिक्ष की लहरों में
कब आये थे तुम चुपके से रजनी के पिछले पहरों में
क्या तुम्हें देखकर आते यों मतवाली कोयल बोली थी
उस नीरवता में अलसाई कलियों ने आँखे खोली थीं
जब लीला से तुम सीख रहे कोरक कोने में लुक करना।
तब शिथिल सुरभि से धरणी में बिछलन न हुई थी सच कहना

नारी के प्रति प्रसाद के हृदय में सदैव एक दैवीय सम्मान रहा । यद्यपि व्यक्तिगत जीवन में जैसा उनके बारे में कहा जाता है उन्हें प्रेम में पराजय ही मिली और 'आंसू' काव्य उसी पराजय की अभूतपूर्व दास्तान है, पर इससे नारी के प्रति उनकी सम्मानजनक भावनाओं में कोई कमी नहीं आयी। प्रसाद ने 'बीती विभावरी जाग री' में' प्रकृति को नारी रूप में देखा और 'कामायनी' में तो मानव प्रवृत्त्यों के रूप में उनके पास मानवीकरण के लिए चिंता, आशा, श्रृद्धा , वासना, लज्जा, ईर्ष्या, इड़ा जैसे अनेक पात्र थे। पर 'लज्जा' सर्ग में प्रसाद ने नारी को जो अभिदान दिया वह हिन्दी साहित्य में अन्यतम है। इसको कवि का आदर्शवाद भी कहा जा सकता है, जो छायावाद का एक अनिवार्य तत्व भी है। निदर्शन निम्न प्रकार है -

"क्या कहती हो ठहरो नारी! संकल्प अश्रु जल से अपने
तुम दान कर चुकी पहले ही जीवन के सोने से सपने।

नारी! तुम केवल श्रद्धा हो विश्वास–रजत–नग पगतल में,
पीयूष–स्रोत सी बहा करो जीवन के सुंदर समतल में।

साहित्येतिहास के आधार पर यह सर्वमान्य है कि अंगरेजी के स्वछन्दतावाद से छायावाद हिन्दी में आया, इसका यह अर्थ भी है की छायावाद स्वछंदतावाद से कही आगे है और छायावाद में स्वछंदतावाद कही घुल मिल गया है । इसलिए छायावाद को समझने के लिए पहले स्वछंदतावाद को समझना आवश्यक है । दरअसल इंग्लैण्ड में कविता के अंतर्गत रोमांटिक स्वछंदतावाद औद्योगिक क्रांति की प्रतिक्रिया के रूप में विकसित हुआ । इसके साथ ही यह सामाजिक और राजनैतिक अभिजातीयकरण के खिलाफ भी एक विद्रोह था । वैज्ञानिक उत्कर्षों की शुष्कता से लोग उकताए और घबराए थे । ऐसे समय में अंग्रेजों ने साहित्य, संगीत और कलाओं में सुकुमार रूमानी कल्पनाओं को स्थान दिया । यह स्वछन्दतावाद छायावाद का अनिवार्य अंग है । 'कामायनी' के बारें में भी यही बात लागू होती है , क्योंकि इसका प्रारम्भ ही एक भौतिकतावादी सभ्यता के विनाश के अधिकरण पर टिका हुआ है । प्रसाद का रोमांटिक स्वच्छ्न्दतावाद उपमा, रूपक, प्रतीक और बिम्ब योजना से अलंकृत है । यथा :

परिरम्भ कुम्भ की मदिरा निश्वास मलय के झोंके
मुख चन्द्र चाँदनी जल से मैं उठता था मुँह धोके ।
थक जाती थी सुख रजनी मुख चन्द्र हृदय में होता
श्रम सीकर सदृश्य नखत से अम्बर पट भीगा होता ।
मादक थी मोहमयी थी मन बहलाने की क्रीड़ा
अब हृदय हिला देती है वह मधुर मिलन की पीड़ा ।

राष्ट्रीयता और देशप्रेम तो प्रसाद के काव्य में ही नहीं उनके नाटकों में भी उभर कर सामने आया है । 'स्कंदगुप्त' नाटक का प्रसिद्ध गीत 'हिमालय के आँगन में उसे प्रथम किरणों का दे उपहार' आत्म गौरव का ओजस्वी उद्‌बोधन है । प्रसाद की दृष्टि में भारत की संस्कृति चाहे वह अशोक की करुणा से आप्यायित हो या बुद्ध की अहिंसा से उसने किसी न किसी रूप में पूरे विश्व को प्रभावित अवश्य किया है । जन जागरण में भी प्रसाद कहीं पीछे नही हैं । आर्य संतान होने का अभिमान उन्हें भी है । मातृगुप्त के शब्दों में उनका यह आत्म गौरव ही मुखर होता है

वही है रक्त, वही है देह, वही साहस है, वैसा ज्ञान
वही है शांति, वही है शक्ति, वही हम दिव्य आर्य संतान ।

मैथिलीशरण गुप्त ने पराधीनता की विदाई और स्वराज्य के आने का संकेत 'साकेत' में दिया था - 'सूर्य का यद्यपि नहीं आना हुआ । किन्तु समझो रात का जाना हुआ ॥ ' इसी प्रकार का सांकेतिक उद्‌बोधन प्रसाद ने 'लहर' काव्य की कालजयी कविता 'बीती विभावरी जाग री' में किया । राष्ट्रीयता , देश प्रेम और जागरण के अनेक गीत प्रसाद के नाटकों और 'लहर' जैसे काव्य में विद्यमान है , चाहे वह 'अब जागो जीवन के प्रभात' कविता हो या 'अपलक जगती रहो एक रात', हो या फिर 'शेरसिंह का शस्त्र(समर्पण' । प्रसाद ने राष्ट्रीय भावों के साथ वैयाक्तिक प्रेम को जिस आदर्श के साथ जोड़ा है वह उनकी अपनी निपुणता है ।

प्रतीकात्मकता, चित्रात्मकता और बिम्ब विधान तो प्रसाद की कविता के आसान उपादान है । इनकी योजना में कवि को लगना नही पड़ता । काव्य प्रवाह के साथ वे स्वयं आते है और अपने अनूठेपन से प्रमाता को विस्मित कर जाते हैं । 'कामायनी' में प्रत्यभिज्ञा दर्शन की योजना होने से उस मे दार्शनिक शब्द प्रतीक भी आये हैं जैसे - गोलक अणु (ज्योतिर्पिंड), भूमा (परम शक्ति), चिति (शिव तत्व) आदि । स्वछंदतावादी प्रतीकों में प्रसाद ने अरुण-किरण (प्रसन्नता), आकाश (हृदय), ऊषा (आनंद),कमल ,कलिका, मुकुल (कोमल भावनायें या नव प्रेमिका), बसंत (यौवन), कोकिल (आशा), जलधर(मधुर कामना) और शशिलेखा (कीर्ति) आदि का उपयोग किया है । इसी प्रकार जिन परम्परावादी प्रतीको का अधिकाधिक उपयोग कवि ने किया है वे इस प्रकार हैं - नाव (जीवन), रात्रि (अन्धकार), भ्रमर (अभिलाषा), दीप शिखा (प्राण ज्योति), कुटिया (जीवन), पथिक (साधक), प्रेमी (भटका हुआ), सागर (परमात्मा या संसार) आदि । प्रसाद की चित्रात्मकता को दर्शाने के लिए 'कामायनी' में श्रद्धा के सौंदर्य -वर्णन का यह दृश्य ही यथेष्ट है –

नील परिधान बीच सुकुमार खुल रहा मृदुल अधखुला अंग,
खिला हो ज्यों बिजली का फूल मेघवन बीच गुलाबी रंग ।
आह वह मुख पश्विम के व्योम बीच जब घिरते हों घनश्याम,
अरूण रवि मंडल उनको भेद दिखाई देता हो छविधाम ।

प्रसाद की बिम्ब योजना उनकी सभी रचनाओं में मुखर है, किन्तु 'लहर' में 'पेशोला' की प्रतिध्वनि ' का बिम्ब बहुत ही प्रभावपूर्ण है । इस कविता में निर्धूम भस्मरहित ज्वलन पिंड के अरुण करुण बिंब का जो चित्रण किया गया है, वह प्रतीकात्मक तो है ही कवि ने इसमें अस्ताचलगामी सूर्य के ब्याज से भारतीय अस्तोन्मुख गौरव गाथा का प्रतिबिंब उकेरना चाहा है । परोक्ष रूप से इस कविता में भारतीयों को प्रेरित किया गया है, जगाया गया है, उन्हें जागरण का संदेश दिया गया है । यहाँ कवि की ललकार चुनौती से भरी हुंकार के रूप में प्रतिफलित हुयी है ।

कौन लेगा भार यह ?
कौन विचलेगा नहीं ?
दुर्बलता इस अस्थिमांस की (
ठोंक कर लोहे से, परख कर वज्र से,
प्रलयोल्का खंड के निकष पर कस कर
चूर्ण अस्थि पुंज सा हँसेगा अट्टहास कौन ?
साधना पिशाचों की बिखर चूर(चूर होके
धूलि सी उड़ेगी किस दृप्त फूत्कार से

छायावाद का एक और आवश्यक अंग विशेषण विपर्यय (Transferred epithet) अंगरेजी साहित्य से हिंदी में आया, ऐसी मान्यता है । इस अलंकार में किसी उपनाम (यहाँ पर विशेषण) को उसके उचित विशेष्य से अंतरित कर दूसरे शब्द से जोड़ दिया जाता है जो वाक्य में उसके साथ घनिष्ठ सम्बन्ध रखता हो । सामान्य शब्दों में कहें तो यह कि एक स्वाभाविक विशेषण को अस्वाभाविक विशेष्य में लगा देना । जैसे - उसने नींद रहित रात गुजारी । यहाँ पर नींद रहित व्यक्ति है पर वाक्य से ऐसा लगता है मानो रात स्वयं निद्रा विहीन हो । हिन्दी साहित्य के वे सभी कवि जिन्हें छावडी कहा जाता हां उन्होंने विशेषण-विपर्यय का बहुलता से प्रयोग किया है । इनमे जिन अप्रत्याशित विशेषण-विशेष्यो का प्रयोग हुआ है उनमे से कुछ इस प्रकार है - स्वप्निल-मुस्कान, मृदु-आघात, मूक-कण, भग्न-दृश्य , नीरव-गान, तन्वंगी-गंगा, गीले-गान, मदिर-बाण, मुकुलित-नयन, सोई-वीणा इत्यादि । प्रसाद ने 'आंसू' काव्य का प्रारंभ इस प्रकार किया है -

इस करुणा-कलित ह्रदय में अब विकल रागिनी बजती ।

क्यो हा-हाकार स्वरों से वेदना असीम गरजती ॥

उक्त पंक्तियों में रागिनी को विकल बताया गया है जो अस्वाभाविक है क्योंकि व्याकुल तो कवि का ह्रदय है । अतः यहाँ पर विशेषण में विपर्यय है । इस प्रकार हम पाते है की छायावाद की जितनी भी प्रवृत्तियां विद्वानों द्वारा बताई गयी है उनका पूर्ण समाहार प्रसाद के बहुविध साहित्य में हुआ है, वे छायावाद को हिन्दी में लाये ही नहीं उसके साथ लम्बे समय तक साहचर्य किया और उसे अन्यतम ऊंचाइयों तक उठाया ।

मनु, श्रद्धा और इड़ा इत्यादि अपना ऐतिहासिक अस्तित्व रखते हुए, सांकेतिक अर्थ की भी अभिव्यक्ति करें तो इसमें कोई आपत्ति नहीं होती। मनु अर्थात मन के दोनों पक्ष हृदय और मस्तिष्क का संबंध क्रमश श्रद्धा और इड़ा से भी सरलता से लगाया जाता है। श्रद्धा हृदय याकूत्या श्रद्धया विन्दते वसु (ऋग्वेद १०(१५१(४) इन्हीं सबके आधार पर कामायनी की कथासृष्टि हुई है। हां, कामायनी की कथा श्रृंखला मिलाने के लिए कहीं कहीं थोड़ी बहुत कल्पना को भी काम में लाने का अधिकार झलकता है।

३·२ **राष्ट्रीय चेतना के कवि प्रसाद**

राष्ट्रीयता की चेतना जगाने के लिए विभिन्न विद्वानों चिंतकों ने समय-समय पर अपना अपना योगदान दिया है। प्रसाद जी ने भी अपनी रचनाओं में अपने युग की राष्ट्रीय भावनाओं को प्रतिबिम्बित किया है।

'प्रेम पथिक' (1910) से 'कामायनी' (1936) तक प्रसाद जी के रचनाकाल के अध्ययन से हम पाते हैं कि उनमें राष्ट्रीय चेतना और आधुनिक भावबोध कूट-कूट कर भरे हुए थे।

"बात कुछ छिपी हुई है गहरी,
मधुर है स्रोत, मधुर है लहरी।"

उपर्युक्त पंक्तियां 'छायावाद' के स्वरूप को रेखांकित करती हैं। प्रसाद जी को छायावाद का प्रवर्तक कहा जाता है। छायावाद को नवजागरण की अभिव्यक्ति कहा जाता है। इस नवजागरण के पीछे राष्ट्रीय सांस्कृतिक चेतना सक्रिय थी। छायावाद का मूल उत्स भारतीय स्वाधीनता संघर्ष में है। जब लोगों में दासता के ख़िलाफ़ संघर्ष के भाव मुखरित हुए, तो उनमें स्वाधीनता की चेतना जगी। इसी चेतना का परिणाम है - कल्पना पर अधिक बल।

ध्यान करने वाली बात यह है कि हिंदी कविता में छायावाद और भारतीय राजनीतिक मंच पर महात्मा गांधी का आगमन लगभग एक साथ हुआ। तभी तो डॉ. नगेन्द्र कहते हैं, "जिन परिस्थितियों ने हमारे दर्शन और कर्म को अहिंसा की ओर प्रेरित किया, उन्होंने ही भाव वृत्ति को छायावाद की ओर ।"

प्रसाद जी के काव्य में हमें नवीन भावबोध के साथ स्वाधीनता की चेतना, सूक्ष्म कल्पना, लाक्षणिकता, नए प्रकार का सादृश्य विधान, नया सौंदर्य बोध आदि के दर्शन होते हैं। छायावादी काव्य में राष्ट्रीय जागरण, सांस्कृतिक जागरण के रूप में आता है। नन्ददुलारे वाजपेयी ने आधुनिक साहित्य में कहा है, केवल राष्ट्रीयता की भावना देश और समाज के सांस्कृतिक जीवन के बहुमुखी पहलुओं का स्पर्श नहीं करती और एक बड़ी सीमा तक एकांगी बनी रहती है। नवयुग के कवियों ने इस तथ्य को समझ लिया था और इसीलिए उनकी रचनाएं 'राष्ट्रीय' न रहकर अधिक राष्ट्रीय और सांस्कृतिक भूमियों पर पहुंची थीं ।

प्रसाद जी की रचनाओं में कहीं भी भाव स्थूलता का वर्णन नहीं है। इनमें अनुभूति का सूक्ष्म वर्णन है। वे स्वच्छंदतावादी भी थे। हालांकि कुछ आलोचकों ने, जब उन्होंने "ले चल मुझे भुलावा देकर, मेरे नाविक धीरे धीरे" लिखा था, पलायनवादी होने का आरोप लगाया। किंतु हमें इस बात का ध्यान रखना होगा कि प्रसाद जी की राष्ट्रीय चेतना और 'द्विवेदी कालीन' कवियों, मैथिलीशरण गुप्त, सुभद्रा कुमारी चौहान, माखनलाल चतुर्वेदी, की चेतना में अंतर है। उनकी राष्ट्रीय चेतना बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' के 'विप्लव गान' और 'निराला' के 'जागो फिर एक बार' से भी भिन्न है। इनमें राष्ट्रीयता का स्वरूप स्थूल हैं, इनमें उद्‌बोधन है, विदेशी सत्ता से मुक्त होने का आह्वान है।

प्रसाद जी की राष्ट्रीय चेतना का स्वर प्रच्छन्न है, कोमल है, सौम्य है, सूक्ष्म है। यह सीमित अर्थ में राष्ट्रवाद नहीं है। यहां राष्ट्रीय जागरण ने सांस्कृतिक जागरण का रूप धारण कर लिया है। इस सांस्कृतिक जागरण की अभिव्यक्ति 'प्रथम प्रभात', 'अब जागो जीवन के प्रभात', 'बीती विभावरी जाग री' आदि रचनाओं के अध्ययन से स्पष्ट हो जाती है। प्रसाद जी की राष्ट्रीय चेतना की अभिव्यक्ति शैली अभिधात्मक नहीं है, बल्कि यह अप्रत्यक्ष है, व्यंजना पर आधारित है - यह स्वच्छन्दतावाद की मूल चेतना से अभिन्न है -

अब जागो जीवन के प्रभात।
वसुधा पर ओस बने बिखरे

हिमकन आंसू जो क्षोभ भरे
ऊषा बटोरती अरुण गात।

जहां प्रसाद जी सूक्ष्म, सास्कृतिक और सौम्य हैं वहीं द्विवेदी युगीन काव्य स्थूल है। भाषा की विलक्षणता पर ज़ोर देकर, आंतरिकता के स्पर्श और आधुनिक बोध और बदली हुई काव्य दृष्टि द्वारा वे मनुष्यों की मुक्ति को महत्त्व दे रहे थे। बंधनों से छुटकारा पाने को बल दे रहे थे। एक प्रकार से यह स्वाधीनता की चेतना के विकास का काम था। नया सौंदर्य बोध, नयी संबंध भावना के विकास का काम था। भारतेदु युग में राष्ट्रीय आदर्शवाद अस्पष्ट और अमूर्त रूप में था। द्विवेदी युग में इतिवृत्तात्मकता और विवरेणात्मकता प्रमुख हो गई, जो स्थूल कथन पर आश्रित थी। प्रसाद जी के समय और उनके द्वारा राष्ट्रीय चेतना अधिक गहरी है, प्रौढ़ है, परिपक्व है। उन्होंने परतंत्र देशवासियों में नवजागरण का शंख फूंका। 'लहर' में संकलित लम्बी कविता 'अशोक की चिंता', 'शेरसिंह का शस्त्र समर्पण', 'पेशोला की प्रतिध्वनि', तथा 'प्रलय की छाया' में नवजागरण के संकेत हैं। ये रचनाएं ज्ञढघण के आस(पास लिखी हईं। प्रसिद्ध आलोचक नामवर सिंह ने कहा कि यह ज्ञढघण के में भारत में राजनैतिक पराभव या पराजय की भावना की अभिव्यक्ति है। 'प्रलय की छाया' का राजनीतिक अर्थ स्वाधीनता संग्राम के एक विशेष दौर की मनोदशा से संबद्ध है। नामवर सिंह व्याख्या के क्रम में संकेत करते हैं कि कमलावती राजशक्ति को नष्ट करने की कोशिश में स्वयं नष्ट हुईं। इससे उसकी आत्मप्रवंचना के निहितार्थों का अनुमान किया जा सकता है। प्रसाद जी इस पराजय की भावना से देशप्रेम का संदेश देते हैं।

इसी प्रकार 'अशोक की चिंता' और 'अरी ओ करुणा की शांत कछार' में भी राष्ट्र के प्रति गर्व गौरव की भावना अंकित किया गया है। कवि अशोक के नरसंहार के बाद हृदय परिवर्तन और बौद्ध(धर्म ग्रहण के माध्यम से यह बताना चाहता है कि राजारशासक का धर्म है जनता की सेवा करना। कवि शांति का संदेश देते हुए कहता है कि विजय लोहे की नहीं होती, विजय आत्मा की होती है। और वह प्रेम, शांति और मानवता से ही संभव है। कवि राष्ट्रीय एकता का भी संदेश इस कविता के माध्यम से देता है।

'पेशोला की प्रतिध्वनि' में महाराणा प्रताप को अस्ताचल के सूर्य के रूप में बताया गया है। वह निर्धन है, ज्वलंतहीन है। पर इसके द्वारा एक तरह से जागृति का संदेश है - हम पराजित होकर भी जीवित हैं। इसके द्वारा यह भी बताया गया है कि जिसे जीतना चाहिए

था, वह हारा है। 'अरी ओ करुणा के कछार' सारनाथ के पास यमुना का वर्णन है। भगवान बुद्ध के अहिंसा, शांति, करुणा के संदेश को याद करता हुआ कवि कहता है -

छोड़ कर जीवन के अतिभाव, मध्य पथ से लो सुगति सुधार।
दुख का समुदय उसका नाश, तुम्हारे कर्मों का व्यापार।
विश्व मानवता का जयघोष, यहीं पर हुआ जलद(स्वर(मंद।
मिला था यह पावन आदेश, आज भी साक्षी है रवि चन्द्र।

प्रसाद जी में संकुचित राष्ट्रीयता नहीं है। यह देश की सीमा से बंधा हुआ नहीं है। यह विश्व(राष्ट्रीयता है - इसमें विश्व(मंगल की कामना है।

'बीती विभावरी जाग री!
... ...
तू अब तक सोई है आली
आंखों में भरे विहाग री ।"

इन पंक्तियों के द्वारा प्रसाद जी राष्ट्र को जागरण का संदेश देते हैं। नन्ददुलारे वाजपेयी का कहना है, "बीती विभावरी जाग री" शीर्षक जागरण गीत प्रसाद जी के संपूर्ण काव्य(प्रयास के साथ उनकी युग(चेतना का परिचायक प्रतिनिधि गीत कहा जा सकता है। राष्ट्रीय चेतना का स्थूल रूप उनके नाटकों के गीतों, 'अरुण यह मधुमय देश हमारा' और 'हिमाद्रि तुंग श्रृंग से' में मिलता है। नाटकों के माध्यम से उन्होंने राष्ट्रीय चेतना का प्रसार किया। और जब वे कहते हैं -

इस पथ का उद्देश्य नहीं है श्रांत भवन में टिक रहना,
किंतु पहुंचना उस सीमा पर जिसके आगे राह नहीं।

तो वे समग्र विश्व तक राष्ट्रीय चेतना का प्रसार करते प्रतीत होते हैं। इसका क्लासिक उदाहरण है - 'कामायनी'।

'कामायनी' संकुचित राष्ट्रवाद से ऊपर उठकर विश्वमंगल वाली रचना है। वह संपूर्ण मानवजाति की समरूपता का सिद्धांत अपनाकर आनंद लोक की यात्रा का संदेश देती है -

समरस थे जड़ और चेतन
सुंदर आकार बना था

चेतना एक विलसती
आनंद अखंड घना था।
या
'विश्व भर सौरभ से भर जाए
सुमन के खेलों सुंदर खेल।'

'कामायनी' आधुनिक जीवन बोध का महाकाव्य है। इसमें संघर्ष करना सिखाया गया है। कर्म करना सिखाया गया है। विश्व मंगल इसका मूल प्रयोजन है। उसकी मूल संकल्पना संकुचित राष्ट्रवाद के विरुद्ध है। मुक्तिबोध इड़ा को पूंजीवादी सभ्यता की उन्नायिका कहते हैं। इसमें संदेह नहीं कि श्रद्धा, जो रागात्मक वृत्ति का प्रतीक है, का आदर्शीकरण प्रसाद जी करते हैं। श्रद्धा मनु को जीवन में वापस लाती है। कर्मक्षेत्र में आने से आनंद की प्राप्ति होती है। फिर भी इड़ा का जो व्यक्तित्व विधान है उसमें नई युग चेतना के सभी सकारात्मक तत्त्व वर्तमान हैं -

'बिखरी अलकें ज्यों तर्क(जाल।
गुंजरित मधुप(सा मुकुल सदृश
वह आनन जिसमें भरा गान
वक्षस्थल पर एकत्र धरे
संसृति के सब विज्ञान ज्ञान
था एक हाथ में कर्म कलश
वसुधा जीवन रस सार लिए
दूसरा विचारों के नभ को
था मधुर अभय अवलंब लिए।'

प्रसाद जी की व्यापक राष्ट्रीय सांस्कृतिक चेतना का विश्वमंगल से विरोध न था। वे उत्पीड़न के विरोध में थे - द्वंद्वों से क्षुब्ध थे - विषमता रहित समाज की स्थापना चाहते थे। 'कामायनी' की मिथकीय सीमाओं में भी कर्म चेतना, संघर्ष चेतना, एकता जैसे तत्त्व हैं, जिनका महत्त्व राष्ट्रीय आंदोलन के लिए था।

'चित्राधार' में तो वे यहां तक कहने का साहस कर गए कि उस ब्रह्म को लेकर मैं क्या करूंगा जो साधारण जन की पीड़ा नहीं हारता। 'आंसू' में भी विश्वमंगल की भावना की अभिव्यक्ति हुई है।

'सबका निचोड़ लेकर तुम
सुख से सूखे जीवन में
बरसो प्रभात हिमकन सा
आंसू इस विश्व सदन में।'

हालांकि घनीभूत पीड़ा आंसू में अभिव्यक्ति पाती है, लेकिन यहां महत्त्वपूर्ण यह है कि व्यक्तिगत वेदना कैसे व्यापक कल्याण भावना में बदलने लगती है।

'चिरदग्ध दुखी यह वसुधा
आलोक मांगती तब भी।'
यही अनुभव कवि को विश्व भावना तक ले जाता है।

सारांशतः हम यह कह सकते हैं कि प्रसाद जी का काव्य राष्ट्रीय काव्य, सांस्कृतिक जागरण का काव्य हैं। ये स्वाधीन चेतना के बल पर नई मानव परिकल्पना में सक्षम हैं। वह नई संबंध भावना का संकेत हैं। यहां राष्ट्रीयता का भाव संकुचित नहीं है, बल्कि विश्वमंगल हेतु है।

'शक्तिशाली हो, विजयी बनो
विश्व में गूंज रहा यह गान।'

३.३ छायावादी कवि

सूर्यकांतत्रिपाठी निराला

सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' (11 फरवरी 1896(15 अक्टूबर 1961) हिन्दी कविता के छायावादी युग के चार प्रमुख स्तंभों में से एक माने जाते हैं। अपने समकालीन अन्य कवियों से अलग उन्होंने कविता में कल्पना का सहारा बहुत कम लिया है और यथार्थ को प्रमुखता से चित्रित किया है। वे हिन्दी में मुक्तछंद के प्रवर्तक भी माने जाते हैं। 1930 में प्रकाशित अपने काव्य संग्रह परिमल की भूमिका में वे लिखते हैं("मनुष्यों की मुक्ति की तरह कविता की भी मुक्ति होती है।

मनुष्यों की मुक्ति कर्म के बंधन से छुटकारा पाना है और कविता की मुक्ति छन्दों के शासन से अलग हो जाना है। निराला जी का जन्म रविवार को हुआ था इसलिए यह सुर्जकुमार कहलाए। 11 जनवरी, 1921 ई. को पं. महावीर प्रसाद को लिखे अपने पत्र में निराला जी ने अपनी उम्र 22 वर्ष बताई है। रामनरेश त्रिपाठी ने कविता कौमुदी के लिए सन् 1926 ई. के अन्त में जन्म सम्बंधी विवरण माँगा तो निराला जी ने माघ शुक्ल 11 सम्वत 1953 - 1896) अपनी जन्म तिथि लिखकर भेजी। यह विवरण निराला जी ने स्वयं लिखकर दिया था। बंगाल में बसने का परिणाम यह हुआ कि बांग्ला एक तरह से इनकी मातृभाषा हो गयी।

निराला की शिक्षा हाई स्कूल तक हुई। बाद में हिन्दी संस्कृत और बांग्ला का स्वतंत्र अध्ययन किया। पिता की छोटी सी नौकरी की असुविधाओं और मान अपमान का परिचय निराला को आरम्भ में ही प्राप्त हुआ। उन्होंने दलित शोषित किसान के साथ हमदर्दी का संस्कार अपने अबोध मन से ही अर्जित किया। तीन वर्ष की अवस्था में माता का और बीस वर्ष का होते होते पिता का देहांत हो गया। अपने बच्चों के अलावा संयुक्त परिवार का भी बोझ निराला पर पड़ा। पहले महायुद्ध के बाद जो महामारी फैली उसमें न सिर्फ पत्नी मनोहरा देवी का, बल्कि चाचा, भाई और भाभी का भी देहांत हो गया। शेष कुनबे का बोझ उठाने में महिषादल की नौकरी अपर्याप्त थी। इसके बाद का उनका सारा जीवन आर्थिक संघर्ष में बीता। निराला जी ने 1918 से 1922 तक महिषादल राज्य की सेवा की। उसके बाद संपादन स्वतंत्र लेखन और अनुवाद कार्य किया। इन्होंने 1922 से 23 के दौरान कोलकाता से प्रकाशित 'समन्वय' का संपादन किया। 1923के अगस्त से 'मतवाला' के संपादक मंडल में काम किया। इनके इसके बाद लखनऊ में गंगा पुस्तक माला कार्यालय और वहाँ से निकलने वाली मासिक पत्रिका 'सुधा' से 1935 के मध्य तक संबद्ध रहे। इन्होंने 1942 से मृत्यु पर्यन्त इलाहाबाद में रह कर स्वतंत्र लेखन और अनुवाद कार्य भी किया।

रचनाएँ

निराला की रचनाओं में अनेक प्रकार के भाव पाए जाते हैं। यद्यपि वे खड़ी बोली के कवि थे, पर ब्रजभाषा व अवधी भाषा में भी कविताएँ गढ़ लेते थे। उनकी रचनाओं में कहीं प्रेम की सघनता है, कहीं आध्यात्मिकता तो कहीं विपन्नों के प्रति सहानुभूति व सम्वेदना, कहीं देश प्रेम का ज़ज़्बा तो कहीं सामाजिक रूढियों का विरोध व कहीं प्रकृति के प्रति झलकता

अनुराग।इलाहाबाद में पत्थर तोड़ती महिला पर लिखी उनकी कविता आज भी सामाजिक यथार्थ का एक आईना है।

काव्यसंग्रह (जूही की कली कविता की रचना 1916 में की गई। अनामिका(1923, परिमल1930, गीतिका1936, द्वितीय अनामिका1938अनामिका के दूसरे भाग में सरोज समृति और राम की शक्ति पूजा जैसे प्रसिद्ध कविताओं का संकलन है। तुलसीदास 1938, कुकुरमुत्ता 42, अणिमा 43, बेला 46, नये पत्ते 46, अर्चना 50, आराधना 53, गीत कुंज 54, सांध्यकाकली, अपरा।

उपन्यास : अप्सरा, अलका, प्रभावती1946, निरुपमा, कुल्ली भाट, बिल्लेसुर बकरिहा ।

कहानी संग्रह : लिली, चतुरी चमार, सुकुल की बीवी(1941, सखी, देवी ।

निबंधः रवीन्द्र कविता कानन, प्रबंध पद्म, प्रबंध प्रतिमा, चाबुक, चयन, संग्रह ।

पुराण कथा : महाभारत

अनुवादः आनंद मठ, विष वृक्ष, कृष्णकांत का वसीयतनामा, कपालकुंडला, दुर्गेश नन्दिनी, राज सिंह, राजरानी, देवी चौधरानी, युगलांगुल्य, चन्द्रशेखर, रजनी, श्री रामकृष्ण वचनामृत, भरत में विवेकानंद तथा राजयोग का बांग्ला से हिन्दी में अनुवाद

सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' की काव्यकला की सबसे बड़ी विशेषता है चित्रण कौशल। आंतरिक भाव हो या बाह्य जगत के दृश्य रूप, संगीतात्मक ध्वनियां हो या रंग और गंध, सजीव चरित्र हों या प्राकृतिक दृश्य, सभी अलग अलग लगनेवाले तत्त्वों को घुला मिलाकर निराला ऐसा जीवंत चित्र उपस्थित करते हैं कि पढ़ने वाला उन चित्रों के माध्यम से ही निराला के मर्म तक पहुँच सकता है। निराला के चित्रों में उनका भावबोध ही नहीं, उनका चिंतन भी समाहित रहता है। इसलिए उनकी बहुत सी कविताओं में दार्शनिक गहराई उत्पन्न हो जाती है। इस नए चित्रणकौशल और दार्शनिक गहराई के कारण अक्सर निराला की कविताऐं कुछ जटिल हो जाती हैं, जिसे न समझने के नाते विचारक लोग उन पर दुरूहता आदि का आरोप लगाते हैं। उनके किसानबोध ने ही उन्हें छायावाद की भूमि से आगे बढ़कर यथार्थवाद की नई भूमि निर्मित करने की प्रेरणा दी। विशेष स्थितियों, चरित्रों और दृश्यों को देखते हुए उनके मर्म को पहचानना और उन विशिष्ट वस्तुओं को ही चित्रण

का विषय बनाना, निराला के यथार्थवाद की एक उल्लेखनीय विशेषता है। निराला पर अध्यात्मवाद और रहस्यवाद जैसी जीवन विमुख प्रवृत्तियों का भी असर है। इस असर के चलते वे बहुत बार चमत्कारों से विजय प्राप्त करने और संघर्षों का अंत करने का सपना देखते हैं। निराला की शक्ति यह है कि वे चमत्कार के भरोसे अकर्मण्य नहीं बैठ जाते और संघर्ष की वास्तविक चुनौती से आँखें नहीं चुराते। कहीं कहीं रहस्यवाद के फेर में निराला वास्तविक जीवन अनुभवों के विपरीत चलते हैं। हर ओर प्रकाश फैला है, जीवन आलोकमय महासागर में डूब गया है, इत्यादि ऐसी ही बातें हैं। लेकिन यह रहस्यवाद निराला के भावबोध में स्थायी नहीं रहता, वह क्षणभंगुर ही साबित होता है।

15 अक्टूबर, 1961 को अपनी यादें छोड़कर निराला इस लोक को अलविदा कह गये पर मिथक और यथार्थ के बीच अन्तर्विरोधों के बावजूद अपनी रचनात्मकता को यथार्थ की भावभूमि पर टिकाये रखने वाले निराला आज भी हमारे बीच जीवन्त हैं। इनकी मृत्यु प्रयाग में हुई थी।

सुमित्रानन्दन पंत

सुमित्रानंदन पंत का जन्म 20 मई 1900 को हुआ। हिंदी साहित्य में चगयवादी युग के प्रमुख कवियों में पंत जी का नाम प्रमुख है। इनका जन्म अल्मोड़ा जिले के कोसानी बागेश्वर उत्तराखंड में हुआ था। जन्म के 6 घण्टे बाद ही इनकी माता का निधन हो गया था। उनका लालन पालन दादी ने किया। उनके बचपन कस नाम गुंसाई दत्त था। सात भाई बहनों में सबसे छोटे थे पंत। उनकी प्रारम्भिक शिक्षा अल्मोड़ा मे हुई। 1918 में वे काशी आये। और उन्होंने क्वीन्स कालेज से माध्यमिक परीक्षा उत्तीर्ण की। बाद में इलाहाबाद चले गए। उन्हें अपना नाम पसंद नहीं था इसलिए उन्होंने अपना नाम सुमित्रानंदन पंत रख लिया। इलाहाबाद के म्योर कालेज से बारहवीं में दाखिला लिया।

1921 में असहयोग आंदोलन के दौरान महात्मा गांधी के साथ असहयोग आंदोलन में भाग लिया। अंग्रेजी का'लेजो का सरकारी कार्यालयों का इन्होंने बहिष्कार किया। और इन्होंने वह कालेज छोड़ दिया।

घर पर ही अध्ययन कर हिंदी,संस्कृत,बंगला व अंग्रेजी भाषाओं का अध्ययन किया ।

आकाशवाणी इलाहाबाद में सलाहकार के पद पर कार्य किया ।

इनके यहाँ के झरने बाग बर्फ पुशो लाता भंवरा गुंजन उषा किरण शीतल पवन तारों की चुनरी ओढ़े गगन से उतरती संध्या ये सब प्रतिदिन देख पंत जी ने सहज रूप से कविताओं की रचना की। ये सब उनकी कविताओं में वर्णित है।निसर्ग के उपादानों का प्रतीक व बिम्ब के रूप मर प्रयोग उनकी काव्य की विशेषता है ।

उनका व्यक्तित्व बहुमुखी था। एक गज़ब का आकर्षण था उनमें। गौर वर्ण लंबे लंबे घुंघराले बाल रखते थे। ऊंची आवाज में बतियाते थे। शारीरिक सौष्ठव देखते ही बनता था।

पंत वृति से शिक्षक थे। अच्छे लेखक थे।उन्होंने कई गीत व कविताएँ लिखी जो कालजयी बनी। रहस्यवाद प्रगतिवाद आंदोलन किए।

पंत जब सात वर्ष के थे तभी से उन्होंने कविता लिखना प्रारम्भ कर दिया था। उस समय वे कक्षा चार में पढ़ते थे। उनकी प्रमुख रचनाएँ : अनुभूति,महात्मा जी के प्रति,मोह,सांध्य वंदना,वायु के प्रति,श्री सूर्यकान्त त्रिपाठी के प्रति,आज रहने दो यह ग्रह काज,चंचल पग दीप शिखा से,संध्या के बाद,वे आंखे, विजय,लहरों का गीत,यह धरती कितना देती है,में सबसे छोटी होऊँ, मछुए का गीत,चाँदनी, जीना अपने मे ही,बापू के प्रति,ग्राम श्री,जग के उर्वर आंगन में,काले बादल,तप रे,आज़ाद,द्रुत झरो जगत के जीर्ण पत्र,गंगा, अमर स्पर्श,आओ हम अपना मन टोवे,परिवर्तन,जग जीवन मे जो चिर महान,पाषाण खण्ड,नौका व विहार,भारत माता,आत्मा का चिर धन,धरती का आंगन इठलाता,बाल प्रश्न,ताज,बांध दिए क्यों प्राण,चींटी,याद,वह बुड्ढ़ा, घण्टा, बापू,प्रथम रश्मि,दो लड़के,पर्वत प्रदेश में पावस, छोड़ द्रुमों की मृदु छाया,धेनुएँ, पंद्रह अगस्त उन्नीस सौ सैतालीस, गीत विहंग। सुमित्रानंदन पंत नए युग के प्रवर्तक कहे जाते हैं। प्रकृति चित्रण करने वाले पंत आकर्षक व्यक्तित्व के धनी कहे जाते हैं। पंत अंग्रेजी के रूमानी कवियों जैसी वेशभूषा में रहते थे। प्रकृति केंद्रित साहित्य की रचना करने वाले कवि थे। हिंदी साहित्य के विलियम वर्ड्सवर्थ कहे जाते थे। इन्होंने ही अमिताभ बच्चन को अमिताभ नाम दिया था।

पंत को पद्मभूषण 1961 में, ज्ञानपीठ पुरस्कार 1968 में, सहित साहित्य अकादमी पुरस्कार तथा अन्य कई पुरस्कार प्रदान किए गए। ज्ञानपीठ पुरस्कार उन्हें “चिदम्बरा” काव्य कृति हेतु प्रदान किया गया था।

पंत की रचनाओं में समाज के यथार्थ के साथ ही प्रकृति चित्रण भी देखा जा सकता है। आधी सदी से भी अधिक लंबे रचनाकाल में पंत ने कई रचनाएँ लिखी।

नेपोलियन से प्रभावित होकर इन्होंने अपने बाल भी उन्हीं की तरह रखे थे। बालपन में दादी की कहानियों ने इन्हें कवि बना दिया।

पल्लव इनका तीसरा कविता संग्रह खूब लोकप्रिय हुआ जों प्रकाशित हुआ। इनकी कविता अमर स्पर्श में लिखते है।

खिल उठा हृदय
पा स्पर्श तुम्हारा अमृत अभय
खुल गए साधना के बंधन
संगीत बना उर का रोदन
अब प्रीति द्रवित प्राणों का पण
सीमाएं अमिट हुई सब लय
क्यों रहे न जीवन में सुख दुख
क्यों जन्म मृत्यु से चित्त विमुख
तुम रहो दृगों के जो सम्ममुख
प्रिय हो मुझको भ्रम भय संशय
तन में आयें शैशव यौवन
मन में हो,विरह मिलन के व्रण
युग स्तिथियों से प्रेरित जीवन
उर रहे प्रीति में चिर तन्मय
जो नित्य अनित्य जगत का क्रम
व रहे न कुछ बदले हो कम
हो प्रगति हास का भी विभ्रं
जग से परिचय तुम से परिणय
तुम सुंदर से बन अतिसुन्दर
आओ अंतर में अंतरतर
तुम विजयी जो प्रिय हो मुझ पर
वरदान पराजय हो निश्चय

पल्लव ऐसी ही कुल 32 कविताओं का बेहतरीन संकलन है ।उन्होंने अपने जीवनकाल में 28 कृतियाँ लिखी। विस्तृत वांग्मय उनका आज भी सुरक्षित है। पंत एक दार्शनिक,विचारक,मानवतावादी दृष्टिकोण के कवि साहित्यकार थे।इनका व्यक्तिगत संग्रहालय का नाम"सुमित्रानंदन पंत साहित्यिक वीथिका" के नाम से आज भी मौजूद है। ये प्रगतिशील लेखक संघ सर जुड़े रहे। इनके साथ रघुपति सहाय व शमशेर प्रमुख थे । सत्र 1955 से 1962 तक ये आकाशवाणी में मुख्य निर्माता के पद पर सेवारत रहे।

वीणा पल्लव के छोटे गीत विराट व्यापक सौंदर्य व पवित्रता से साक्षत्कार कराते हैं।1907 से 1918 का इनकी साहित्य यात्रा का प्रथम चरण कहलाता हैं।

पंत जी ने साहित्य यात्रा के तीन पड़ावों में छायावादी, समाजवादी, व प्रगतिवादी बन उत्कृष्ट एवम कालजयी रचनाओं का सृजन किया ।

प्रकृति चित्रण करते ये लिखते हैं :

"जौ गेंहूँ की स्वर्णिम बाली।

भू का अंचल वैभवशाली ।"

इनके नाम से इलाहाबाद में एक उद्यान है जिसे सुमित्रानंदन उद्यान कहा जाता है।

उनका मानना था कि स्वाध्याय से ही साहित्य और दर्शन का ज्ञानार्जन होता है।पंत के काव्य में प्रकृति का बहुत आत्मीय गहरा और व्यापक चित्रण मिलता है जो हिंदी साहित्य की अमूल्य निधि है। ये कविता में शब्दों का चयन बखूबी करते थे।उनकी कविताओं में शब्द संगीत,चित्रात्मकता एवम व्यंजना प्रधान अर्थ देने की अद्भत क्षमता है।उन्हें "प्रकृति के सुकुमार कवि" कहा जाता है क्योंकि उनकी रचनाओं में कोमल कान्त पदावली है। उनकी स्वच्छन्दतावादी रुचि है।

पंत जी ने खड़ी बोली को मिठास दिलाई।हिंदी को "युगवाणी" की संज्ञा दी। पंत जी की प्रगतिशील दौर की कविता वे आंखे में किसानों का दुख दर्द लिखा। उनकी कविता संध्या के बाद में उन्होंने गांवों के लोगों की विपन्नता,गरीबी के दृश्य का सुंदर शब्दों में वर्णन किया है। कविता ग्राम श्री में उन्होंने ग्राम्य प्रकृति पर आधारित कविता लिखी।गांवों की प्राकृतिक सुषमा और समृद्धि का मनोहारी वर्णन किया है।

वे लिखते हैं:

“फैली खेतों में दूर तलक
मखमल की कोमल हरियाली,
लिपटी जिसमें रवि की किरणें
चाँदी की सी उजली जाली!
तिनकों के हरे हरे तन पर
हिल हरित रुधिर है रहा झलक,
श्यामल भूतल पर झुका हुआ
नभ का चिर निर्मल नील फलक!
महादेवी वर्मा

हिंदी साहित्य को जिन रचनाकारों ने अपनी अलग पहचान के साथ समृद्ध किया है, उनमें महादेवी वर्मा का नाम प्रमुखता से लिया जाता है. महादेवी हिंदी साहित्य के छायावादी युग की कवयित्री हैं. इनकी कविताओं में करुणा, संवेदना और दुख के पुट की अधिकता है. उन्हें ‘आधुनिक मीराबाई’ भी कहा जाता है. महादेवी वर्मा

महादेवी वर्मा (१६मार्च १९०७ – ११ सितंबर १९८७) हिन्दी की सर्वाधिक प्रतिभावान कवयित्रियों में से हैं। वे हिन्दी साहित्य में छायावादी युग के चार प्रमुख स्तंभों में से एक मानी जाती हैं। आधुनिक हिन्दी की सबसे सशक्त कवयित्रियों में से एक होने के कारण उन्हें आधुनिक मीरा के नाम से भी जाना जाता है। कवि निराला ने उन्हें “हिन्दी के विशाल मन्दिर की सरस्वती” भी कहा है। महादेवी ने स्वतंत्रता के पहले का भारत भी देखा और उसके बाद का भी। वे उन कवियों में से एक हैं जिन्होंने व्यापक समाज में काम करते हुए भारत के भीतर विद्यमान हाहाकार, रुदन को देखा, परखा और करुण होकर अन्धकार को दूर करने वाली दृष्टि देने की कोशिश की। न केवल उनका काव्य बल्कि उनके सामाजसुधार के कार्य और महिलाओं के प्रति चेतना भावना भी इस दृष्टि से प्रभावित रहे। उन्होंने मन की पीड़ा को इतने स्नेह और शृंगार से सजाया कि दीपशिखा में वह जन जन की पीड़ा के रूप में स्थापित हुई और उसने केवल पाठकों को ही नहीं समीक्षकों को भी गहराई तक प्रभावित किया।

महादेवी और बौद्ध दर्शन की छाप

वैसे तो अपने देश की संस्कृति में हर कन्या या स्त्री को देवी को दर्जा दिया जाता है. इनके परिवार में सात पीढ़ियों के बाद कोई लड़की पैदा हुई थी, इसलिए इनका नाम महादेवी रखा गया. आगे चलकर इन्होंने महिलाओं के अधिकारों के लिए लड़कर अपने नाम को सार्थक किया.

महादेवी का निजी जीवन उस दौर की अन्य महिलाओं से काफी अलग रहा. तब बाल विवाह चलन में था. जब ये ९ बरस की थीं, तभी इनका विवाह कर दिया गया. विवाह के वक्त वे अबोध बालिका थीं, पर बाद में भी ताउम्र वैवाहिक जीवन के प्रति वे उदासीन बनी रहीं. कारण पूरी तरह स्पष्ट नहीं, लेकिन इसके पीछे बौद्ध दर्शन का प्रभाव माना जा सकता है. वे बौद्ध भिक्षुणी बनना चाहती थीं, पर बाद में कर्मयोग को अपनाया. महादेवी ने सफेद वस्त्र पहनकर संन्यासिन की तरह अपना जीवन गुजारा. इनके जीवन की छाप इनकी रचनाओं में भी देखी जा सकती है, जिसमें संवेदना की अधिकता है. कर्मक्षेत्र में महात्मा गांधी, रवींद्रनाथ टैगोर, डा'. राजेंद्र प्रसाद जैसी शख्सयित के संपर्क में आने से इनके विचारों को दिशा मिली. छायावाद में वैयक्तकिता हावी रही. केवल अपना ही आलाप होता रहा. कवियों ने सुख(दुख, आशा(निराशा के भाव में गोते लगाए. दूसरी बड़ी बात यह थी कि छायावादी कवियों ने अपने मन का हर तरह का भाव बताने के लिए प्रकृति के विविध रूपों का सहारा लिया. महादेवी की रचनाएं इनसे अछूती नहीं थीं.

ऐसा माना जाता है कि छायावादी कवि अपने सामाजिक दायित्वों से कट गए थे. लेकिन गौर करने वाली बात यह है कि महादेवी के शब्दों में आजादी पाने को आकुल भारत माता का दर्द भी महसूस किया जा सकता है.

महादेवी, मतलब महिला सशक्तकिरण

महादेवी साहित्य जगत में महिला सशक्तकिरण का प्रतीक हैं. वे कई लेखिकाओं के लिए प्रेरणास्रोत बनीं. तब कवि महिलाओं के प्रति संवेदना से सनी कविताएं रचते थे. महादेवी ने इस संवेदना की जगह स्वयंवेदना को शब्दों में पिरोया, मतलब अपने मन के भाव को खुद आकार दिया.

महादेवी जी की तमाम सुंदर रचनाओं के बीच 'मैं नीर भरी दुख की बदली' काफी लोकप्रिय है. इसकी खासियत यह है कि इसमें महादेवी ने अपना परिचय चंद शब्दों में कविता के जरिए समेट दिया है.

चतुर्थ अध्याय

कामायनी छायावाद की एक प्रमुख कृति

'कामायनी' जयशंकर प्रसाद की और सम्भवतः छायावाद युग की सर्वश्रेष्ठ कृति मानी जाती है। प्रौढ़ता के बिन्दु पर पहुँचे हुए कवि की यह अन्यतम रचना है। इसे प्रसाद के सम्पूर्ण चिंतन(मनन का प्रतिफलन कहना अधिक उचित होगा। इसका प्रकाशन 1936 ई. में हुआ था। हिन्दी साहित्य में तुलसीदास की 'रामचरितमानस' के बाद हिन्दी का दूसरा अनुपम महाकाव्य 'कामायनी' को माना जाता है। यह 'छायावादी युग' का सर्वश्रेष्ठ महाकाव्य है। इसे छायावाद का 'उपनिषद' भी कहा जाता है। 'कामायनी' के नायक मनु और श्रद्धा हैं।स्थूल रूप में कामायनी का प्रारंभ देव संस्कृति के विनाश से होता है और यह विनाश भीषण जलप्लावन से हुआ, जिसमें केवल मनु जीवित बचे क्योंकि वह देव सृष्टि के अंतिम अवशेष थे। जल प्लावन समाप्त होने पर मानव जाति का विकास हुआ, जिसके मूल में चिंता थी। उसके कारण ही मानव में जरा और मृत्यु की अनुभूति जागी। एक दिन काम की पुत्री श्रद्धा मनु के समीप आई। वे दोनों साथ(साथ रहने लगे। भावी शिशु की कल्पना में निमग्न श्रद्धा को एक दिन मनु ईर्ष्यावश छोड़कर चल दिए। उनकी भेंट सारस्वत प्रदेश की अधिष्ठात्री इड़ा से हुई। इड़ा ने उन्हें शासन का भार सौंप दिया। पर इड़ा पर मनु के अत्याचार और आधिपत्य भाव को देखकर, वहाँ की प्रजा ने एक दिन विद्रोह कर दिया। मनु आहत हो गए। तभी श्रद्धा उन्हें खोजती हुई वहाँ आ पहुची। उसका पुत्र मानव भी साथ में था। किन्तु मनु पश्चाताप में डुबे थे। वह उन सबको छोड़कर फिर वहाँ से चल दिए । श्रद्धा ने मानव को इड़ा के पास छोड़ दिया। अपने मनु की खोज में चल दी। उसकी खोज सफ़ल हुई मनु उसे मिल गए। अंत में सारस्वत प्रदेश के सभी प्राणी कैलास पर्वत पर जाकर श्रद्धा और मनु के दर्शन करते हैं।

'कामायनी' आदि मानव की कथा तो है ही, पर इसके माध्यम से प्रसाद जी ने अपने युग के महत्त्वपूर्ण प्रश्नों को भी उभारा है। चिंता से आरम्भ कर आनंद तक यह महाकाव्य पंद्रह सर्गो में विभक्त है। यों तो कथावस्तु वेद, उपनिषद् , पुराण आदि से प्रेरित है किंतु कवि ने मुख्य आधार शतपथ ब्राह्मण को स्वीकार किया है। शतपथ ब्राह्मण के प्रथम कांड आठवें अध्याय से जलप्लावन संबंधी उल्लेखों का संकलन कर प्रसाद ने इस काव्य का कथानक निर्मित किया है। साथ ही उपनिषद् और पुराणों में मनु और श्रद्धा का जो रूपक वर्णित है

उन्होंने उसे भी अस्वीकार नहीं किया। चारों ओर जल ही जल था और 'तरुण तपस्वी' देवताओं की श्मशान भूमि में साधना कर रहा था। प्रलय का जल धीरे धीरे उतरने लगा। नौका महावट से बँधी थी। उस पुरुष के हदय में चिंता का उदय होता है। उसे देव सृष्टि का स्मरण हो आता है। आरंभिक सर्ग में जलप्लावन, अमरत्व की अपूर्णता, जीवन और मृत्यु की समस्या पर विचार किया गया है। 'कामायनी' की कथा के चार भाग हैं :

(१) प्रलय और मनु प्रसंग

(२) श्रद्धा मनु सम्मिलन और जन्म प्रसंग

(३) इड़ा मनु संयोग और सारस्वत प्रदेश आख्यान

(४) मनु का त्रिपुर दर्शन और कैलास यात्रा प्रसंग। किन्तु प्रसाद जी ने इस महाकाव्य का निर्माण ज्ञछ सर्गों में विभाजित करके किया है। 'कामायनी' का सर्ग विभाजन निम्न प्रकार है(क.चिंतन ख.आशा ग.श्रद्धा घ.काम ड.वासना च.लज्जा छ.कर्म ज.ईर्ष्या झ.इड़ा ञ.स्वप्न ट.संघर्ष ठ.निर्वेद ड.दर्शन ढ.रहस्य ण.आनंद

असल में यहाँ मनु मन के प्रतीक हैं (उसके समान ही अस्थिर मति है। श्रद्धा और इड़ा क्रमशः उसके हदय और बुद्धिपक्ष हैं। पहले श्रद्धा की प्रेरणा से वह तपस्वी जीवन त्याग कर प्रेम और प्रणय का मार्ग अपनाते हैं। फिर असुर पुरोहित आकुलि और किलात के बहकावे में आकर, हिंसावृत्ति और स्वेच्छा के वशीभूत हो, श्रद्धा का सुख(साधनपूर्ण साथ छोड देते हैं। भटकते हुए सारस्वत प्रदेश में जा पहुचते हैं। श्रद्धा के प्रति मनु के दुर्व्यवहार से क्षुब्ध काम का अभिशाप सुन हताश हो किंकर्तव्यविमूढ़ हो जाते हैं। इड़ा के ससर्ग से बुद्धि की शरण में जा भौतिक विकास की राह पर चलते हैं, वहाँ भी संयम के अभाव में इड़ा पर अत्याचार करने लगते हैं। प्रजा से उनका सघर्ष होता है। इस संघर्ष में पराजित और प्रकृति के प्रकोप से विक्षुब्ध मनु जीवन से विरक्त हो पलायन काते हैं। अंत में श्रद्धा का अनुसरण करते हुए आध्यात्मिक आनंद प्राप्त करते हैं। मनु अंतिम समय में श्रद्धा की सहायता से ही उच्च भाव(भूमि पर पहुँच जाते हैं। त्याग और बलिदान का जो संदेश वह सबको देती है, उसका पालन स्वयं जीवन(भर करती है। प्राणिमात्र के सुख के लिए काम करना ही श्रेयस्कर है। वह 'बहुजन हिताय बहुजन सुखाय' का सिद्धांत मानती हुई कहती है (

औरों को हसते देखो मनु

हँसो और सुख पाओ

अपने सुख को विस्तृत कर लो
सबको सुखी बनाओ

जीवन के सूखे पतझर में श्रद्धा हरियाली भर देती है। मानव के पूरक रूप में वह आधुनिक नारी प्रतीत होती है। मनु कृतज्ञता से भर उठते हैं और कहते हैं(

कि तुम्हीं ने
मुझे स्नेह दिखाया (

हृदय बन रहा था सीपी सा
तुम स्वाती की बून्द बनीं
मानस शतदल झूम उठा जब
तुम उसमें मकरंद बनीं

मानव के अग्रजन्मा देव निश्चिंत जाति के जीव थे। किसी भी प्रकार की चिंता न होने के कारण वे 'चिर किशोरवय' तथा 'नित्यविलासी' देव आत्म-मंगल-उपासना में ही विभोर रहते थे। प्रकृति यह अतिचार सहन न कर सकी और उसने अपना प्रतिशोध लिया। भीषण जलप्लावन के परिणामस्वरूप देवसृष्टि का विनाश हुआ, केवल मनु जीवित बचे। देवसृष्टि के विध्वंस पर जिस मानव जाति का विकास हुआ उसके मूल में थी 'चिंता', जिसके कारण वह जरा और मृत्यु का अनुभव करने को बाध्य हुई। चिंता के अतिरिक्त मनु में दैवी और आसुरी वृत्तियों का भी संघर्ष चल रहा था जिसके कारण उनमें एक ओर आशा, श्रद्धा, लज्जा और इड़ा का आविर्भाव हुआ तो दूसरी ओर कामवासना, ईर्षा और संघर्ष की भी भावना जगी। इन विरोधी वृत्तियों के निरंतर घात-प्रतिघात से मनु में निर्वेद जगा और श्रद्धा के पथप्रदर्शन से यही निर्वेद क्रमशः दर्शन और रहस्य का ज्ञान प्राप्त कर अंत में आंनद की उपलब्धि का कारण बना। यह चिंता से आनंद तक मानव के मनौवैज्ञानिक विकास का क्रम है। साथ ही मानव के आखेटक रूप में प्रारंभ कर श्रद्धा के प्रभाव से पशुपालन, कृषक जीवन और इड़ा के सहयोग से सामाजिक और औद्योगिक क्रांति के रूप में भौतिक विकास एवं अंत में आध्यात्मिक शांति की प्राप्ति का उद्योग मानव के सांस्कृतिक विकास के विविध सोपान हैं। इस प्रकार कामायनी मानव जाति के उद्‌भव और विकास की कहानी है।

प्रसाद ने इस काव्य के प्रधान पात्र 'मनु' और कामपुत्री कामायनी 'श्रद्धा' को ऐतिहासिक व्यक्ति के रूप में माना है, साथ ही जलप्लावन की घटना को भी एक ऐतिहासिक तथ्य स्वीकार किया है। शतपथ ब्राह्मण के प्रथम कांड के आठवें अध्याय से जलप्लावन संबंधी उल्लेखों का संकलन कर प्रसाद ने इस काव्य का कथानक निर्मित किया है, साथ ही उपनिषद् और पुराणों में मनु और श्रद्धा का जो रूपक दिया गया है, उन्होंने उसे भी अस्वीकार नहीं किया, वरन कथानक को ऐसा स्वरूप प्रदान किया जिसमें मनु, श्रद्धा और इड़ा के रूपक की भी संगति भली भाँति बैठ जाए। परंतु सूक्ष्म सृष्टि से देखने पर जान पड़ता है कि इन चरित्रों के रूपक का निर्वाह ही अधिक सुंदर और सुसंयत रूप में हुआ, ऐतिहासिक व्यक्ति के रूप में वे पूर्णत: एकांगी और व्यक्तित्वहीन हो गए हैं।

मनु मन के समान ही अस्थिरमति हैं। पहले श्रद्धा की प्रेरणा से वे तपस्वी जीवन त्याग कर प्रेम और प्रणय का मार्ग ग्रहण करते हैं, फिर असुर पुरोहित आकुलि और किलात के बहकावे में आकर हिंसावृत्ति और स्वेच्छाचरण के वशीभूत हो श्रद्धा का सुख-साधन-निवास छोड़ झंझा समीर की भाँति भटकते हुए सारस्वत प्रदेश में पहुँचते हैंस श्रद्धा के प्रति मनु के दुर्व्यवहार से क्षुब्ध काम का अभिशाप सुन हताश हो किंकर्तव्यविमूढ़ हो जाते हैं और इड़ा के संसर्ग से बुद्धि की शरण में जा भौतिक विकास का मार्ग अपनाते हैं। वहाँ भी संयम के अभाव के कारण इड़ा पर अत्याचार कर बैठते हैं और प्रजा से उनका संघर्ष होता है। इस संघर्ष में पराजित और प्रकृति के रुद्र प्रकोप से विक्षुब्ध मनु जीवन से विरक्त हो पलायन कर जाते हैं और अंत में श्रद्धा के पथप्रदर्शन में उसका अनुसरण करते हुए आध्यात्मिक आनंद प्राप्त करते हैं। इस प्रकार श्रद्धा–आस्तिक्य भाव–तथा इड़ा–बौद्धिक क्षमता–का मनु के मन पर जो प्रभाव पड़ता है उसका सुंदर विश्लेषण इस काव्य में मिलता है।

काव्य रूप की दृष्टि से कामायनी चिंतनप्रधान है, जिसमें कवि ने मानव को एक महान संदेश दिया है। 'तप नहीं, केवल जीवनसत्य' के रूप में कवि ने मानव जीवन में प्रेम की महत्ता घोषित की है। यह जगत कल्याणभूमि है, यही श्रद्धा की मूल स्थापना है। इस कल्याणभूमि में प्रेम ही एकमात्र श्रेय और प्रेय है। इसी प्रेम का संदेश देने के लिए कामायनी का अवतार हुआ है। प्रेम मानव और केवल मानव की विभूति है। मानवेतर प्राणी, चाहे वे चिरविलासी देव हों, चाहे मानव हो. ।

आज हम सँस्कृति के एक ऐसे दौर से गुजर रहे हैं, जो भयंकर संकट की परिधि से आवृत है। सभ्यता व सँस्कृति का यह संकट मात्र हमारे देश तक ही सीमित नहीं है, वरन् यह पूर्व से ले कर पश्चिम, उत्तर से लेकर दक्षिण तक समूचे विश्व में व्याप्त है। इस संकट का मूल है : गति से परिवर्तित होता आज का 'मूल्य बोध' । आज हमारे पुराने मूल्य ध्वस्त हो चुके हैं और नये मूल्य प्रतिस्थापित हो नहीं पाए हैं। अतएव आज का समाज मूल्यों से विलग हुआ, भ्रमित हो रहा है। जो मूल्य थोड़े बहुत हैं भी, तो वे इतने दीन हीन हैं कि उन्हें मूल्य कहना भी उचित नहीं लगता। सार यह है कि आज हम हीनमूल्य और मूल्यहीन दोनों ही हैं। हमारे चार पुरुषार्थों में "धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष" में आज के मानव की दृष्टि मात्र "अर्थ और काम" पर ही केन्द्रित है। यदि हम कहें कि आज का समाज, आज के मानव का दृष्टिकोण पूर्णतः पूँजीवादी और उपभोक्तावादी है, तो अत्युक्ति न होगी। किन्तु इस पूँजीवाद के विरोध में हर युग में एक दूसरा वर्ग भी समाज में देखा गया हैं (वह है कम्युनिस्ट यानी "साम्यवादी वर्ग" जो "वर्गहीन समाज" का पक्षधर है, एक ऐसे समाज पर बल देता है जिसमें न कोई अमीर हो न गरीब, न कोई शासक न शासित, न छोटा न बड़ा वरन् हर दृष्टि से सब समान हों। किन्तु समाज पूँजीवादी हो या साम्यवादी, दोनों प्रकार के समाज में व्याप्त मूल्यों के आधार (उपयोगितावाद, सुखवाद अर्थात् भौतिकवादी दृष्टिकोण हैं। सामंजस्य के नाम पर हमारे समाज के तथाकथित राजनैतिक व सामाजिक संगठनों के ठेकेदार कितनी विषमता और उत्पात फैलाते हैं, यह तो जगजाहिर है। कम्युनिस्ट देशों में भी राज्याधिकारियों को, सशक्त वर्गों को सत्ता हथियाने व राजनीति का शिखर पर पहुँचने हेतु मूल्यहीन तरीकों को अपनाते देखा गया है। सुख की, व अधिकाधिक लाभ व स्वार्थ की सिद्धि हेतु मानव का अहर्निश संघर्ष दिन (प्रतिदिन नृसंश रूप धारण करता जा रहा है। मनुष्य की मनुष्य से, एक परिवार की दूसरे परिवार से, एक वर्ग की दूसरे वर्ग से, एक जाति की दूसरी जाति से, एक प्रान्त की दूसरे प्रान्त से व एक देश की दूसरे देश से आगे बढ़ने की होड़ में अनेक प्रकार की प्रतिस्पर्धा में, एक विकट संघर्ष, युद्ध व विप्लव जन्म ले रहा है और वह उत्तरोत्तर बढ़ता ही जा रहा है। आज मानवजाति विनाश के कगार पर खड़ी है। इससे पूर्व हम दो विश्व युद्धो की विभीषिका से गुज़र ही चुके हैं। समय-समय पर खड़े होने वाले छोटे-छोटे देशी युद्धों की तो सीमा ही नहीं। इस सबके उपरान्त भी मानव जाति शायद युद्ध करते थकी नहीं। संयुक्त राष्ट्र संघ व अन्य बड़े-बड़े देशों के बीच बचाव कराने के बावजूद भी मानव की संघर्षशील प्रवृत्ति सघन बनी हुई है। समाज में चहुँ दिशि, घर से

लेकर बाहर तक, विषमता के ही दर्शन होते हैं। प्रत्येक व्यक्ति अधिक सुख व समृद्धि की खोज में दुःख को उपलब्ध हुआ भटक रहा है।गरलसम ऐसी विकट स्थिति को परिवर्तित करके, अमृततुल्य बनाने में, क्या 'कामायनी' हमारी सहायक सिद्ध हो सकती है ? सम्भवतः आपको मेरे चिन्तन का विषय हास्यास्पद लगे, क्योंकि जब बड़े (बड़े समाजशास्त्री, दार्शनिक व विश्व की महती राष्ट्र शक्तियाँ इस समस्या का निदान खोजने में असमर्थ व असफल हैं, तो एक काव्य ग्रंथ की, मनु, श्रद्धा व इड़ा की कथा की क्या बिसात ? 'कामायनी' कोई साधारण ग्रंथ नहीं, यह एक दार्शनिक चिन्तन पूर्ण एक असाधारण दार्शनिक महाकाव्य है, जो जीवन के, समाज के, समग्र पक्षों व विविध क्षेत्रों के उदात्त व अनुदात्त रूपों, महत्वपूर्ण समस्याककं व विषमताओं को प्रस्तुत कर ऐसे अचूक निदान, ऐसी मधुर दृष्टि, ऐसा गहन चिन्तन प्रदान करता है कि वे हर युग में समीचीन हैं। हरदेश काल में उपादेय हैं। यह अद्‌भुत ग्रंथ समाज, सँस्कृति, मनोविज्ञान, मनोविश्लेशण, समाजशास्त्र, राजनीति, धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष सभी का निदर्शन करता है। इन सभी को हम समान्वित रूप में इस ग्रंथ में पाते हैं। कामायनी के आमुख में प्रसाद जी ने स्पष्ट कहा है : "सूक्ष्म अनुभूति या भाव 'चिरंतन सत्य' के रूप में प्रतिष्ठित रहता है। जिसके द्वारा युगयुग के पुरुषों की और पुरुषार्थों की अभिव्यक्ति होती रहती है" 'कामायनी' की कथा पौराणिक होने पर भी, वह इतिहास, वेदों या पुराणों तक ही सीमित नहीं है, वरन् कविवर प्रसाद के स्वयं के शब्दों में "वह श्रद्धा और मनु अर्थात मनन के सहयोग से मानवता का विकास रूपक है। वह मानवता का मनोवैज्ञानिक इतिहास बनाने में समर्थ हो सकता है।"श्रद्धा, मनु, इड़ा तथा कामायनी में प्रस्तुत विभिन्न घटनाओं को इतिहास या गाथा कह कर भुलाया नहीं जा सकता। समसामयिक परिप्रेक्ष्य में उसका अनुशीलन अपरिहार्य है।आज के समाज, आज के मानव की पूँजीवादी और उपभोक्तावादी वृत्ति प्रसाद जी की कामायनी में कुछ इस तरह दर्ज़ है "मनोभाव से कार्य कर्म का, समतोलन में रतचित्त से।ये निस्पृह न्यायासनवाले, चूक न सकते तनिक वित्त से॥" (रहस्य सर्ग)ये ज्ञानी अपनी-अपनी भावनाओं के अनुसार कर्त्त व कर्म के मूल्यांकन में लीन हैं। बड़े ध्यान से विधि निषेध की मर्यादा की प्रतिष्ठा करते हैं। ये निष्काम और न्याय (आसन) वाले हैं, पर धन से तनिक भी विचलित नहीं होते।प्रसाद जी ने मानव के विषम स्वभाव की इस सच्चाई की ओर कामायनी में कुछ इस तरह इंगित किया है –"सामंजस्य करने चले ये, किन्तु विषमता फैलाते हैं।मूल तत्व कुछ और बताते, इच्छाककं को झुठलाते हैं॥" (रहस्य सर्ग)'कामायनी' प्रत्येक दृष्टि से आज के समाज से

जुड़ी है। यद्यपि छायावादी शैली के कारणकामायनी में सांकेतिकता का प्राधान्य है, जैसा कि स्वयं प्रसाद जी ने स्पष्ट कहा है –"मनु, श्रद्धा और इड़ा अपना ऐतिहासिक अस्तित्व रखते हुये, सांकेतिक अर्थ की भी अभिव्यक्ति करें तो मुझे कोई आपत्ति नहीं। मनु अर्थात् मन के दोनों पक्ष हृदय और मस्तिष्क का संबंध क्रमशः श्रद्धा व इड़ा से सरलता से लग जाता है।"किन्तु अपनी सांकेतिकता के साथ साथ वह अपने विविध वक्तव्यों, काव्यप्रसंगों व पात्रों के माध्यम से आधुनिक युग की विविध समस्याओं, घटनाओं, व्यक्तियों, उनके मनोविज्ञान उनकी जीवन दृष्टि का भी प्रतिनिधित्व करती है, मतलब कि वह किसी युग विशेष तक सीमित नहीं है : यही उसकी असाधारणता है, विलक्षणता है।साँस्कृतिक संकट के परिप्रेक्ष्य में जब हम कामायनी का अनुशीलन करते हैं, तो कामायनी का प्रारम्भ प्रलय के दृश्य से होने के कारण वह समशील परिस्थितियों में बड़ा अर्थपूर्ण प्रतीत होता है। प्रसाद जी ने कामायनी में उल्लिखित इस प्रलय का मूल "पंच भैरव मिश्रण" बताया है –पंच भूत का भैरव मिश्रण, शम्पाककं के शकल निपात,उल्का लेकर अमर शक्तियाँ, खोज रही ज्यों खोया प्रातः ॥(चिन्ता सर्ग)सम्भवतः ऐसा प्रसाद जी ने पौराणिकता की रक्षा की भावना से किया है। यह स्थूल कारण कहा गया है। किन्तु साथ ही प्रलय की विभीषिका के सूक्ष्म चिन्तन पर आधारित पक्ष का भी कवि ने उल्लेख किया है – वह है देवसँस्कृति । देवताओं की विलासिता, उदण्डता, उच्छृंखलता व दंभ की अति के कारण प्रलय आती है और देव जाति विनाश को प्राप्त होती है। इड़ा सर्ग में कवि ने प्रलय व विनाश के कारणों की श्रंखला में देवों और असुरों की उन एकांगी मान्यताककं की ओर भी संकेत किया है,जो दोनों के मध्य द्वन्द्व का हेतु बनती हैं। ठीक वैसी ही मान्यताएँ, व्यष्टिवाद, विलासिता, सुख भोग की लालसा, उदण्डता, उच्छृंखलता अन्याय, शोषण, दम्भ वर्तमान समाज में एकाधिकार जमाए हुए हैं। मुक्तिबोध जी ने भी इस संबंध में कहा है कि –"कामायनी में वर्णित प्रलय व उसके कारणों को किसी युग के मूल्य विघटन व मूल्य संघात (नाश, वध, टक्कर) व उससे उत्पन्न विनाश की स्थिति के प्रतिबिम्बन के रूप में देखा जा सकता है।" आज समाज में उदण्डता, उच्छृंखलता अन्याय, शोषण, दम्भ, विलासिता का जैसा ताण्डव हो रहा है उसे नकारा नहीं जा सकता। भयंकर प्रलय के पीड़ा बोध से भरे, समूची देवजाति के विनाश के कारण एकाकी, चिन्ता में आकण्ठ निमग्न मनु को निराशा व हताशा इतना अधिक आवृत्त कर लेती है कि उस स्थिति में वह विनाश, अंधकार व मृत्यु को ही सत्य मानता है।"अंधकार के अट्टाहास सी, मुखरित सतत चिंतरन सत्य।"(चिन्ता सर्ग)उदण्डता,

उच्छृंखलता, विलासिता और दम्भ जैसी नकारात्मक वृत्तियों के कारण जब व्यक्ति पारस्परिक धोखाधड़ी, छल (कपट, आर्थिक हानि, मान हानि, विकृत सामाजिक छवि की पीड़ा से गुज़रता है तो आत्महत्या, साथियों की हत्या, जैसे घृणित कार्यकरने से भी पीछे नहीं हटता। आज विश्वस्तर पर ऐसा ही घटित हो रहा है और प्रतिदिन धोखाधड़ी, छल – कपट, आत्महत्या और हत्या की घटनाएँ बढ़ती ही जा रहीं हैं।प्रलय की असहनीय पीड़ा से मुक्ति पाने हेतु जैसे मनु को उस एकान्त वीरान प्रदेश में मृत्यु ही सत्य लगती है ठीक वैसे ही आज मानव की यही दशा है। जब व्यक्ति दुःखों और कष्टों से घिरा होता है, तो वह उनसे मुक्ति पाने के लिए मृत्यु का वरण करना ही संगत मान बैठता है। हाल ही में शेयर बाज़ार में भारी गिरावट आने से न जाने कितने लोगों ने निराश होकर आत्महत्या कर ली। पूरा विश्व इस आत्महनन की चपेट में आया सपरिवार मृत्यु का वरण ही संगत मान बैठा। कितने ही युवक (युवतियाँ रिश्तों को ईमानदारी से न निबाहने के कारण, एक दूसरे के प्रति उपजे शक़ के कारण हत्या करके अपराधी बन रहें हैं। किन्तु हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि जीवन में अगर निराशा व दुःख है, तो आशा और सुख भी है। इसी द्वन्द्वात्मक नियम चक्र के अन्तर्गत कामायनी में मनीषी कवि एकाकी, निराश, हताश मनु में आशा के संचार का उल्लेख बड़ी प्रगल्भता से, अरुणिम भोर के मोहक वर्णन के प्रतीक रूप में करता है – "उषा सुनहले तीर बरसती, जय लक्ष्मी सी उदित हुई।उधर पराजित काल रात्रि भी, जल में अन्तर्निहित हुई ।" मैं भी कहने लगा हूँ, मैं रहूँ, शाश्वत नभ के गानों में ।"(आशा सर्ग)

जब व्यक्ति आशा व उत्साह से भरा हुआ होता है, तो उसमें आत्मविस्तार की भावना बलवती होती है। अतः निराशा से उबर कर, आशा से अन्वित मनु में "मैं रहूँ, मैं रहूँ" की इच्छा गहरी होती है। "एको अहम् बहुस्याम" की अनादि इच्छा की ककर ही प्रसाद जी ने मनु के माध्यम से प्रकारान्तर से संकेत किया है। श्रद्धा अन्तःकरण की उदात्त वृत्ति का प्रतीक, उदास व खिन्न मनु के जीवन में नव आशा संचार करती है, उसे जीने की प्रेरणा देती है और उसके आत्मविस्तार की इच्छा पूर्ति हेतु सच्चे हृदय से पूरी तरह मनु को समर्पित होती है। फलस्वरूप, अत्यधिक उर्जा, शक्ति, तुष्टि से भरा मनु अपने पूर्व परिचित देव जाति के संस्कारों के कारण अग्निहोत्र में प्रवृत्त होता है, आखेट व मृगया के लिए भटकता फिरता है तथा बाद में असुर पुरोहित आकुलि और किलात के सम्पर्क में आने पर, उनकी प्रेरणा से वह श्रध्दा के पशु की बलि भी देता है।"वेदी की निर्मम प्रसन्नता, पशु की

कातर वाणीमिलकर वातावरण बना था, कोई कुत्सित प्राणी॥"(कर्म सर्ग) ठीक यही मनोविज्ञान हर तृप्त, अति सुख भोग में डूबे मनुष्य में हर युग में देखा जा सकता है।

प्रसाद ने अपने काव्यों में रूढ़ियों का उल्लंघन करते हुए कथ्य और शिल्प के क्षेत्र में अनेक प्रियोग किए। उनके लिखे मुक्तक , खंडकाव्य एवं महाकाव्य , काव्यरूप संबन्धि उनकी प्रयोग क्षमता के परिचायक हैं। 'कामायनी' भी विशिष्ट शैली का महाकाव्य है। उसकी गरिमा उसके युगबोध, पुष्ट चिंतन, महत् उद्देश्य और प्रौड़ शिल्प में हैं। उसमें पूर्ववर्ती प्राचीन महाकाव्यों जैसा वर्णनात्मक विस्तार नहीं है, पर सर्वत्र गहन अनुभूति से पाठक सराबोर हो उठता है। प्रसाद के सम्पूर्ण चिंतन(मनन को समेटने वाली 'कामायनी' के माध्यम से कवि ने मानव को महान् संदेश दिया है । 'तप नहीं केवल जीवन(सत्य' के रूप में कवि ने मानव जीवन में प्रेम की महत्ता घोषित की है। इस जगत् में प्रेम ही एकमात्र श्रेय और प्रेय है। प्रेम मानव और केवल मानव की ही विभूति है। मानवेतर प्राणी, चाहे वे चिरविलासी देव हों, चाहे देह और भौतिकता में डूबे असुर, दैत्य और दानव हों, चाहे किन्नर या गंधर्व हों, पशु पक्षी हों, प्रेम की प्रतिष्ठा केवल मानव ने की है। लेकिन प्रसाद ने प्रेम में समरसता और समन्वय का प्रतिपादन किया है। संसार के द्वन्दों का उद्‌गम शाश्वत सत्य है(फूल के साथ काँटे, भाव के साथ अभाव, सुख के साथ दुख और रात्रि के साथ दिन (यह चक्र चलता रहता है। मानव इनमें से एक को चुन लेता है, दूसरे को छोड देता है। यही उसके विषाद का कारण होता है। अनेक स्थलों पर प्रसाद साक्षात् चित्र निर्मित कर देते हैं। मानव की चित्तवृत्तियों का पात्र के रूप में अवतरण और उन्हें मूर्त कर देना असाधारण उपलब्धि है। लज्जा, सौंदर्य, श्रद्धा, इड़ा का मानव रूप में चित्रण हिंदी साहित्य की अनमोल विरासत है। प्रसादजी की कामायनी पाठक को शक्ति देती है, पाठक मनु के जीवन से सीखता है कि अधिकार की चाह विष है। चाह हो तो केवल सबके कल्याण की। कवि प्रसाद जी ने वास्तव में 'कामायनी' मे किसी नायक विशेष की कथा नहीं कही है बल्कि सांकेतिक रूप में कवी ने मानव की कथा कही है इसलिए प्रसाद जी की अन्य रचनाओं से उत्कृष्टतम काव्य कामायनी माना गया है। कवि एवं रचनाकार के रूप में कवि प्रसाद जी ने कड़ी एवं लम्बी यात्रा तथा तपस्या की तब कामायनी जैसी रचना का निर्माण हुआ था (

४.१ मनु की कथा

इसमें आदिमानव मनु की कथा ली गयी है। इस काव्य की कथावस्तु वेद, उपनिषद, पुराण आदि से प्रेरित है किंतु मुख्य आधार शतपथ ब्राह्मण को स्वीकार किया गया है। आवश्यकतानुसार प्रसाद ने पौराणिक कथा में परिवर्तन कर उसे न्यायोचित रूप दिया है। 'कामायानी' की कथा संक्षेप में इस प्रकार है(पृथ्वी पर घोर जलप्लावन आया और उसमें केवल मनु जीवित रह गये। वे देवसृष्टि के अंतिम अवशेष थे। जलप्लावन समाप्त होने पर उन्होंने यज्ञ आदि करना आरम्भ किया। एक दिन 'काम पुत्री' 'श्रद्धा' उनके समीप आयी और वे दोनों साथ रहने लगे। भावी शिशु की कल्पना निमग्न श्रद्धा को एक दिन ईर्ष्यावश मनु अनायास ही छोड़ कर चल दिये। उनकी भेंट सारस्वत प्रदेश की अधिष्ठात्री इड़ा से हुई। उसने इन्हें शासन का भार सौंप दिया। पर वहाँ की प्रजा एक दिन इड़ा पर मनु के अत्याचार और आधिपत्य भाव को देखकर विद्रोह कर उठी। मनु आहत हो गये गये तभी श्रद्धा अपने पुत्र मानव के साथ उन्हें खोजते हुए आ पहुँची किंतु पश्चात्ताप में डूबे मनु पुनः उन सबको छोड़कर चल दिये। श्रद्धा ने मानव को इड़ा के पास छोड़ दिया और अपने मनु को खोजते खोजते पा गयी। अंत में सारस्वत प्रदेश के सभी प्राणी कैलास पर्वत पर जाकर श्रद्धा और मनु के दर्शन करते हैं।

पन्द्रह सर्ग

'कामायनी' की कथा पन्द्रह सगों में विभक्त है, जिनका नामकरण चिंता, आशा, श्रद्धा, काम, वासना, लज्जा आदि मनोविकारों के नाम पर हुआ है। 'कामायनी' आदि मानव की कथा तो है ही, पर इसके माध्यम से कवि ने अपने युग के महत्त्वपूर्ण प्रश्नों पर विचार भी किया है।

४.२ कामायनी का आधुनिक संदर्भ

सारस्वत प्रदेश की प्रज्ञा जिस बुद्धिवदिता और भौतिकवादिता से त्रस्त है, वही आधुनिक युग की स्थिति है। 'कामायनी' अपने रूपकत्व में एक मनोविज्ञानिक और दार्शनिक मंतव्य को प्रकट करती है। मनु मनका प्रतीक है और श्रद्ध तथा इड़ा क्रमशः उसके हृदय और बुद्धिपक्ष है। अपने आंतरिक मनोविकारों से संघर्ष करता हुआ मनु श्रद्धा विश्वास की सहायता से

आनन्द लोक तक पहुँचता है। प्रसाद ने समरसता सिद्धांत तथा समन्वय मागं का प्रतिपादन किया है। अंतिम चार सर्गों में प्रतिपादित दर्शन पर शैवागम का प्रभाव है।

४·३प्रसाद की कायामनी इतिहास और कल्पना का समन्वय

कामायनी' एक विशिष्ट शैली का महाकाव्य है। उसका गौरव उसके युगबोध, परिपुष्ट चिंतन, महत उद्देश्य और प्रौढ़ शिल्प में निहित है। उसमें प्राचीन महाकाव्यों का सा वर्णनात्मक विस्तार नहीं है पर सर्वत्र कवि की गहन अनुभूति के दर्शन होते हैं। यह भी स्वीकार करना होगा कि उसमें गीततत्त्व प्रमुखता पा गये हैं। मनोविकार अतयंत सूक्ष्म होते हैं। उन्हें मूर्त रूप देने में प्रसाद ने जो सफलता पायी है वह उनके अभिव्यक्ति कौशल की परिचायक है। कहीं(कहीं भावपूर्ण प्रकाशन में सम्भव है, सफल न हों, पर शिल्प की प्रौढ़ता 'कामायनी' का प्रमुख गुण है। प्रतीक भण्डार इतना समृद्ध है कि अनेक स्थलों पर कवि चित्र निर्मित कर देता है। इस दृष्टि से श्रद्धा का रूप(वर्णन सुन्दर है। लज्जा जैसे सूक्ष्म भावों के प्रकाशन में 'कामायनी' में प्रसाद के चिंतन(मनन को सहज ही देखा जा सकता है। इसे हम भाव और अनुभूति दोनों दृष्टियों से छायावाद की पूर्ण अभिव्यक्ति कह सकते हैं।

जलप्लावन देवों की उच्छृंखल भोगवृत्ति और निर्बाध आत्मतुष्टि का प्रकृति के द्वारा प्रतिकार था। और विध्वंस के उपरांत, मनु मानवसंस्कृति की स्थापना करने वाले आदि पुरुष कहे जाते हैं। इस जलप्लावन से आरम्भ होने वाली मनु, श्रद्धा और इड़ा की कथा के अंशों का विभिन्न पौराणिक ग्रंथों में उल्लेख है। और इसी जलप्लावन पर प्रसिद्द पंक्तियों से कामायनी शुरू होती हैस्

हिमगिरि के उत्तुंग शिखर पर
बैठ शिला की शीतल छाँह,
एक पुरुष भीगे नयनों से
देख रहा था प्रलय प्रवाह।
नीचे जल था ऊपर हिम था
एक तरल था एक सघन,
एक तत्त्व की ही प्रधानता
कहो उसे जड़ या चेतन।

यह तो सभी को पता है कि कामायनी केवल मनु श्रद्धा इड़ा आदि का इतिवृत्तांत भर नहीं है, सर्गों के नामों से ही संकेत मिल जाता है कि यह मानव के अंतस की यात्रा है। प्रसाद कामायनी के आमुख में लिखते भी हैं कि इस कथा में मनु-श्रद्धा-इड़ा "अपना ऐतिहासिक अस्तित्व रखते हुए भी, सांकेतिक अर्थ की भी अभिव्यक्ति" करते हैं। मनु मन के रूपक हैं, और उसके दो पक्ष है : श्रद्धा हृदय या भाव पक्ष की प्रतीक हैं, और इड़ा मस्तिष्क या बुद्धि पक्ष की। कामायनी मनुष्य) की मन के इन दोनों पक्षों के मनन से मानवता की विकास यात्रा है। तो इतना तो लगता है कि कामायनी को समझने से जीवन की समझ बढ़ेगी। परन्तु कामायनी बड़ी सघन है। अगर पढ़ते-पढ़ते कहीं दुरूह और सूक्ष्म पर अटक जाता हूँ तो सांसारिक कर्मों में फँसकर भटकने का बहाना मिल जाता है।

सबसे प्रथम सर्ग है चिंता। हम आयु वृद्धि के साथ और कुछ सीखें या न सीखें, बिना किसी प्रयास के ही सहज चिंता करना जरूर सीख जाते हैं। मनुष्य और चिंता जैसे पर्याय हों। ज़रा सोचिए आज आपने क्या किया? भले ही कुछ और न किया हो लेकिन किसी न किसी बात की चिंता जरूर की होगी। कभी अतीत की चिंता, कभी भविष्य की चिंतास वर्तमान तो मतलब घर की मुर्गी दाल बराबर, जब जी चाहे काटो, पकाओ और खाओ। तो मनु की यात्रा भी चिंता से ही आरम्भ होगी, प्रसाद कहते हैं:

चिंता करता हूँ मैं जितनी
उस अतीत की, उस सुख की,
उतनी ही अनंत में बनती
जातीं रेखाएँ दुख की।
और आगे कहते हैं :
मणि दीपों के अंधकारमय
अरे निराशापूर्ण भविष्य!
देवदम्भ के महामेघ में
सब कुछ ही बन गया हविष्य।
(हविष्यः हवन सामग्री)

ये चिंता भी ईश्वर से कम नहीं है, इसके अनेक रूप हैं : अतीत में जो बुरा था वह क्यों था, उसकी चिंतास अतीत में जो अच्छा था वह अब क्यों नहीं है, उसकी चिंता, अतीत में

जो अच्छा नहीं हुआ वह क्यों नहीं हुआ, उसकी चिंता, अभी अगर दुःख है तो कब तक रहेगा, उसकी चिंता, और अगर सुख है तो कहीं चला न जाए उसकी चिंता। ऐसे ही चिंता के कितने ही रूप हैं, और अपनी ही नहीं दूसरों से तुलना की न जाने कितनी ही चिंताएँ। जैसे गणपति, राम, कृष्ण, शिव से लेकर दुर्गा और काली तक ईश्वररूप के सहस्त्रों विकल्प हैं, जो मन को भाए उसे पूजो वैसे ही चिंता के सहस्त्रों रूप हैं, आपको जो भाए उसे पकड़ के बैठ जाओ।

चिंता होगी, तो दुःख छाया की तरह साथ होगा ही। पर मानव को दुःख तनिक भी प्रिय नहीं हैं, और वह अंततोगत्वा इसका निदान आशा से करता है, चिंता सर्ग की अंतिम पंक्ति में भी सुबह की झलक दिखती है :

वाष्प बना उड़ता जाता था,
या वह भीषण जलसंघात।
सौरचक्र में आवर्तन था,
प्रलय निशा का होता प्रात।
प्रसाद की कामायनी इतिहास और कल्पना का समन्वय

जयशंकर प्रसाद ने 'कलाधर' उपनाम से कविता की रचना का आरंभ किया था । प्रेम और सौंदर्य इनके काव्य के प्रधान विषय हैं। मानवीय संवेदना उसका प्राण है। अनुभूति की तीव्रता, वेदना, कल्पना प्रवणता आदि प्रसाद काव्य की विशेषताएँ हैं। हिन्दी कविता में छायावाद को प्रतिष्ठित करने का श्रेय प्रसाद को ही है। डॉ. द्वारिकाप्रसाद सक्सेना के शब्दों में "प्रसाद छायावाद की काव्यधारा के प्रवर्तक ही नहीं हैं, अपितु उसकी प्रौढ़ता, शालीनता, गुरूता, गंभीरता के भी पोषक कवि हैं। प्रसाद की कविताओं में प्रकृति के सचेतन रूप के साथ साथ मानव के लौकिक एवं पारलौकिक जीवन की जैसी रमणीक झांकी अंकित है, वैसी किसी अन्य कवि की कविता में दृष्टिगोचर नहीं होती ।" प्रसाद जी अपने युग के अत्यंत प्रतिभावान एवं जागरूक छायावादी कवि हैं।

'कामायनी'आधुनिक हिन्दी साहित्य का अमर महाकाव्य है, जिसमें आधुनिक युग की विशेषताओं और प्रवृत्तियों का पूर्ण प्रतिनिधित्व हुआ है और जो अनेक दृष्टियों से अपने युग के पूर्ववर्ती समस्त भारतीय महाकाव्यों से भिन्न एक निराले स्थान का अधिकारी है। छायावादी काव्यधारा के अंतर्गत जो काव्य लिखे गए, उन सभी में प्रसाद का 'कामायनी'

अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान रखता है। आधुनिक युग की मीरा कही जाने वाली हिन्दी की प्रसिद्ध कवयित्री महादेवी वर्मा जी ने लिखा है,''प्रसाद जी की कामायनी महाकाव्यों के इतिहास में एक नया अध्याय जोड़ती है, क्योंकि वह ऐसा महाकाव्य है जो ऐतिहासिक धरातल पर प्रतिष्ठित है और सांकेतिक अर्थ में मानव विकास का रूपक भी कहा जा सकता है। कल्याण भावना की प्रेरणा और समन्वयात्मक दृष्टिकोण के कारण वह भारतीय परम्परा के अनुरूप है ।" इस प्रकार प्रसाद जी ने 'कामायनी' में स्थूल पौराणिक या ऐतिहासिक घटनाओं के भीतर निहित सूक्ष्म और चिरंतन भाव सत्यों की खोज करके उन्हें शाश्वत जीवन मूल्यों के रूप में प्रतिष्ठित किया है और उन्हें ही 'आत्मा की अनुभूति' कहा है ।" प्रसाद का यह महाकाव्य पूर्ववर्ती सभी महाकाव्यों से भिन्न भूमिका पर प्रतिष्ठित है क्योंकि इसमें स्थूल घटनाओं और पात्रों की नहीं, अपितु सूक्ष्म मनोवृत्तियों और भावनाओं के विकास क्रम की कथा कही गई है।

कथा क्रम की दृष्टि से कामायनी की कथा का आधार पौराणिक एवं ऐतिहासिक है। शतपथ ब्राह्मण की जलप्लावन घटना से लेकर पुराणों में बिखरी हुई सामग्री तक का प्रयोग प्रसाद ने किया है। वस्तुतः प्रसाद जी अत्यंत प्राचीन कथा के द्वारा मानव के विकास की सरणियों का निरूपण करना चाहते थे। प्रसाद ने 'कामायनी' में समस्त कथा सूत्रों को एकत्र करके आदि मानव के विकास की कथा कही है।

'कामायनी' के कथानक की दूसरी विशेषता यह है कि इतनी बड़ी कथा होते हुए भी प्रसाद जी ने संक्षिप्त एवं सांकेतिक रूप में उसकी विकास सरणियों को स्पष्ट किया है। वन्य जीवन, नागर सभ्यता, यांत्रिक सभ्यता, उससे पलायन और अंत में आध्यात्मिक जीवन के चित्रण द्वारा हमें कथा के विकास की विभिन्न सरणियां प्राप्त होती हैं। इसी कारण कथा एक सुनियोनित रूप से आगे बढ़ती रहती है। कवि ने बताया कि देव(संस्कृति का विकास मानव के लिए अभिप्रेरित नहीं है, और न यह उसका लक्ष्य है। उसका लक्ष्य है समरसता के द्वारा आनंद की प्राप्ति। भावनाओं और दृष्टिकोणों का समन्वय ही समरसता है। नारी पुरूष, हृदय बुद्धि, सुख दुःख, आशा निराशा आदि सभी दृष्टिकोण से कामायनी का लक्ष्य जीवन में सामंजस्य का प्रयास है। मानव का प्रतीक मनु इस समन्वय दृष्टि से वंचित होने के कारण अनेक कष्ट भोगता है। उसके हृदय पक्ष और बुद्धिपक्ष परस्पर संघर्षरत रहते हैं और यह द्वंद्व तब तक चलता रहता है, जब तक श्रद्धा जीवन में समन्वय नहीं ला देती। प्रसाद जी की

धारणा है कि मन से समरसता, सामंजस्य स्थापित करने से ब्राह्य जगत में भी संतुलन स्थापित हो जाएगा। इस संतुलन से ही व्यक्ति अपने मूल तत्व का विकास कर सकता है और यही उसका वास्तविक विकास है।

'कामायनी' के कथानक द्वारा कवि ने मानवत्व की प्रतिष्ठा का भी अनुपम प्रयास किया है। मनु के मन में एकांत के कारण जिन मानसिक वृत्तियों का उदय होता हैं, उसका मनोवैज्ञानिक विश्लेषण मन के रहस्यों का उद्घाटन करता चला जाता है। 'कामायनी' मानवता के उस विकास को लेती है, जिसमें उठती-गिरती मानवता निरंतर गतिमान रहती है। मानव मन का अंत विश्लेषण करते हुए प्रसाद जी ने उसमें अनेक भावनाओं का आरोह-अवरोह दिखलाया है। मानव के जीवन में नारी का प्रवेश एक महत्वपूर्ण घटना है। श्रद्धा मनु में एक नवीन भावना को जन्म देती है। उसकी इच्छा है 'मानवता विजयिनी हो'। प्रसाद जी अंत में मानवता की विजय ही घोषित करते हैं। पूर्ण मानव का चरित्रांकन उसका मुख्य विषय है।

४.४ कामायनी की विशेषता

'कामायनी' के कथानक की अन्य मुख्य विशेषता यह है कि इसकी कथा में ऐतिहासिक सत्य का आधार तो लिया ही गया है, उसमें मानवता का मनोवैज्ञानिक इतिहास भी उद्घाटित किया गया है। मनु श्रद्धा, इड़ा संबंधी प्राचीन कहानियों में जो रूपक तत्व निहित है, उसी के सहारे कामायनी में प्रस्तुत कथा के आवरण में मानव के सामाजिक और मनोवैज्ञानिक विकास की कथा कही गई है और यह रूपक योजना प्रसाद जी की अपनी कल्पना की उपज और उनकी मौलिक देन है। नंददुलारे वाजपेयी ने लिखा है,"प्रसाद ने मानव वृत्तियों का निरूपण करने वाले अपने काव्य में दार्शनिकता का आभास अवश्य दिया है पर वह दार्शनिकता काव्य का अंग बनकर आई है और उसकी प्रकृति भावना भूमि पर ही अधिष्ठित है। वह काव्य के वस्तु वर्णन और भावात्मक स्वरूप को किसी प्रकार ठेस नहीं पहुँचाती ।" इस प्रकार 'कामायनी' में रूपकत्व संबंधी एक ऐसी विशेषता आ गई है, जो भारतीय या पाश्चात्य किसी भी रूपक कथा में देखने को नहीं मिलती है। 'कामायनी' के कथानक की विशिष्टता पर विचार करते हुए कुछ अन्य तत्वों पर भी हम ध्यान दे तो ज्ञात होता है कि कथासूत्र में क्रम स्थापित करने के लिए प्रसाद ने कल्पना का भी आश्रय लिया है। किन्तु

श्रद्धा के संदेश, मनु के आंतरिक द्वंद्व आदि के द्वारा उन्होंने सत्य का प्रतिपादन किया है। कथा का आधार भारतीय दर्शन है।

'कामायनी' की कथा के अतिरिक्त इसके चरित्र भी प्रसाद जी ने प्राचीन ग्रंथों से ग्रहण किए हैं। मनु, श्रद्धा, इड़ा का नाम अनेक प्राचीन ग्रंथों में मिलता है। भारतीय विद्वानों ने महाकाव्य में नायक के चरित्र का धीरोदात्त गुण समन्वित होना आवश्यक माना गया है। जिसका तात्पर्य यह है कि उसे उन नैतिक सामाजिक और धार्मिक आदर्शों का प्रतीक होना चाहिए, जिन्हें तत्कालीन समाज में मान्यता प्राप्त थी। आधुनिक युग में चरित्रों की मान्यता में भी परिवर्तन हो गया है। आज यह माना जाता है कि चरित्रों को यथार्थ में मानव का चित्र होना चाहिए, आदर्शवादी नहीं। नायक के चरित्रचित्रण की चली आती हुई परम्परा में प्रायः आदर्श और महानता का जो ग्रहण हुआ है, उसके स्थान पर मनु की चरित्र सृष्टि में प्रसाद ने यथार्थ को अधिक ग्रहण किया है। मनु एक साधारण मानव है, जो जीवन के समस्त संघर्षों को झेलता हुआ अंत में आनंद तक पहुँच जाता है। वह वासना, ईर्ष्या की स्वाभाविक दुर्बलताओं से ग्रसित रहता है, किन्तु आगे बढ़ने की उसकी आकांक्षा नहीं मरती। 'कामायनी' के नायक मनु में धीरोदात्त नायक के लक्षण न होने पर भी काव्योचित ह्रास के क्षेत्र में वह एक नितांत, नवीन कल्पना है। कवि ने उसे मानव गुणों और मानवीय दुर्बलताओं से निर्मित किया है। प्राचीन शास्त्रों में महत् चरित्र की ऐसी कोई कल्पना नहीं थी। इस नवीन कल्पना का श्रेय प्रसाद का अत्यंत यथार्थवादी दृष्टिकोण प्रकट करता है और यह आज के युग के अनुरूप ही है (यही मनु का चरित्र चित्रण संबंधी वैशिष्टय है।

इसके साथ ही प्रसाद जी ने श्रद्धा और इड़ा के जो चरित्र प्रस्तुत किए वे यथार्थवादी धरातल पर होते हुए भी मानव जीवन की उच्च सुरूचियों और उच्च भावनाओं के स्वरूप के प्रतीक हैं। यह भी एक महान प्रयास है और यह तत्व महाकाव्य परम्परा को नया आयाम देता है। इसी प्रकार इड़ा भी एक बुद्धिवादी नारी के रूप में चित्रित हुई है। वह अपनी एकांगी बौद्धिक प्रवृत्तियों के होते हुए भी मानवीय गुणों से सम्पन्न हैं। वह निराश मनु को आश्रय देती है। अंतिम समय तक वह मनु को प्रेरित करती है। इड़ा का अंतिम स्वरूव विनम्र हो गया है। वास्तव में बुद्धिमयी होते हुए भी वह अमानवीय, असहिष्णु तथा निमर्म नहीं है। बुद्धि रूप में वह एक शक्ति है, जिसका मनु उचित प्रयोग नहीं कर सकें। इस प्रकार 'कामायनी' के पात्र केवल ऐतिहासिक अथवा पौराणिक बनकर नहीं रह जाते, वे

युगों पूर्व के होकर भी नवीनतम परिस्थितियों में चलते दिखाई देते हैं। इतिहास के अतीत में नवीनता का सृजन एक कुशल कलाकार ही कर सकता है और यही 'कामायनी' का चरित्रगत वैशिष्ट्य है।

४.५ कामायनी की शैली

शैली की दृष्टि से 'कामायनी' हिन्दी में अपने ढंग का निराला महाकाव्य है। उसमें शैली की वह गरिमा, भव्यता और उदात्तता पूर्ण रूप में विद्यमान है, जिसके बिना कोई काव्य 'महाकाव्य' पद का अधिकारी नहीं हो सकता। 'कामायनी' में शैली के विविध तत्वों और पक्षों तथा अभिव्यक्ति के विविध स्वरूपों की पूर्णता है और उन सबके सामंजस्य से ही उसमें शैलीगत और उदात्तता की प्रतिष्ठा हुई हैं। यहाँ हमें भावनाओं की सत्यता, व्यापकता और गहनता मिलती हैं।

'कामायनी' में अनुभूति की सूक्ष्मता और जटिलता की अभिव्यक्ति के लिए अभिव्यंजना के सभी कौशलों के उपयोग किए गये हैं। हमें इस महाकाव्य में लाक्षणिकता, ध्वन्यात्मकता, प्रतीकात्मकता एवं चित्रात्मकता, सुसंगठित अलंकार विधान सुंदर भाषा और सरल शब्द चयन आदि गुण प्राप्त होते हैं। 'कामायनी' का शिल्प किसी परम्परागत पद्धति का अनुसरण नहीं करता। कवि ने अपनी उदात्त कल्पना, प्रांजल अभिव्यक्ति से उसकी संपूर्ण योजना का निर्वाह किया है। काव्य में गीतिमयता का ग्रहण हमें अधिक मिलता है। माधुर्य गुण सम्पन्न भाषा भावों की लहर उठाती चलती है।

'कामायनी' में नाटकीय शैली को ग्रहण किया गया है। मनु और श्रद्धा के मन में उठने वाले भाव और विचार मूर्तिमान होकर संवाद रूप में प्रस्तुत हुए हैं। इसके साथ ही पात्रों के पारस्परिक कथोपकथन भी कथानक को गतिमान करते हैं। 'कामायनी' की नाटकीयता उसके सौंदर्यवर्धन में सहायक हुई है। कामायनी की स्वच्छंदता अनुपम है।

प्राचीन समय में वस्तु वर्णन महाकाव्य का आवश्यक महत्वपूर्ण अंग था। वर्णनात्मक शैली पर महाकाव्य रचे जाते थे। प्रसाद ने इस बाह्य वस्तु वर्णन को अंतर्मुखी कर दिया है। मानवीय भावनाओं के प्रकाशन में उन्होंने संपूर्ण अवधान केन्द्रित कर दिया। सुख दुःख, आशा निराशा के अतिरिक्त मन में उठने वाले सभी विचारों का सम्यक प्रकाशन हुआ है। 'कामायनी' अपने मनोवैज्ञानिक निरूपण के कारण अधिक भावात्मक तथा अंतर्मुखी हो गई।

वस्तु का स्वरूप न चित्रित करके उसका मानव पर पड़ने वाला प्रभाव चित्रित किया गया हैं। हम कह सकते हैं कि प्रसाद की शैली वर्णन, वर्णन प्रधान या विषयप्रधान बहुत कम है, विश्लेषण प्रधान और विषयी प्रधान अधिक है ।

भाव अभिव्यंजना की सरसता गीतिकाव्य में मिलती है। 'कामायनी' में यह गीतितत्व प्रमुखता से पाया जाता है। वर्णन प्रधान महाकाव्य में इसका अभाव देखा जाता है। प्रसाद ने अपने भावों के अनुरूप ही इस शैली को अपनाया है। गीतात्मक शैली द्वारा महाकाव्य का यह निर्माण कवि का मौलिक प्रयास हैं। इस प्रकार शैली की दृष्टि से भी हमें यहाँ विशिष्टता परिलक्षित होती है। आशा, वासना और लज्जा जैसी मनोवृत्तियों को चित्र तुल्य साकार रूप देना 'कामायनी' काव्य की ही विशेषता है।

४.६ कामायनी का उद्देश्य

उद्देश्य की दृष्टि से प्रसाद जी ने 'कामायनी' में मानव जीवन के संभावित विकास को दिखाया है और उसका आनंदमय जीवन किस रूप में सम्पन्न हो सकता है, इसका भी निरूपण किया है। उद्देश्य की महानता की दृष्टि से इसकी तुलना तुलसी के 'मानस' से की जा सकती है। 'मानस' की तरह 'कामायनी' का उद्देश्य भी मानवतावादी और कल्याणकारी हैं। बौद्धिकता और भौतिकता के अतिरेक से पीड़ित और विविध प्रकार के संघर्षों में टूटे हुए मानव को चरम शांति का मार्ग बताना ही यहाँ कवि का उद्देश्य है। प्रसाद जी ने बताया है कि आज के इस संघर्षमय जीवन में बौद्धिकता को श्रद्धा से संयमित करके ही अखण्ड आनंद की उपलब्धि और विश्व शांति की स्थापना हो सकती है। आध्यात्मिक और व्यावहारिक जीवन तथा इच्छा, ज्ञान, क्रिया के बीच सामंजस्य स्थापित करना और इस तरह मानव मानव के बीच की दूरी को मिटाकर पूर्ण मानवता की प्रतिष्ठा करना ही कवि का चरम लक्ष्य है।

आज मानवता बौद्धिकता और विज्ञान के सहारे भौतिक उन्नति के शिखर पर पहुँच चुकी है, परन्तु इस उन्नति के क्रम में उसके हार्दिक गुणों का निरंतर ह्रास होता गया हैं। ऐसे संतप्त विश्व(मानव को प्रसाद ने एक महान आशाजनक संदेश दिया है और वह है श्रद्धा या आध्यात्मिक आस्था का संदेश :

"तुमुल कोलाहल कलह में, मैं हृदय की बात रे मन!

चिर विषाद विलीन मन की,
इस व्यथा के तिमिर वन की,
मैं उषा सी ज्योति रेखा, कुसुम विकसित प्रातः रे मन!
जहाँ मरू ज्वाला धधकती, चातकी कन को तरसती,
उन्हीं जीवन घाटियों की, मैं सरस बरसात रे मन!''

४.७ निष्कर्ष

इस प्रकार यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि महाकाव्य के तत्वों में से प्रत्येक में वैशिष्ट्य के समावेश से प्रसाद रचित 'कामायनी' महाकाव्य परम्परा में एक नवीन मोड़, नया धरातल तथा मानदण्ड प्रस्तुत करती है। इस महाकाव्य में नवीन प्रयोग किए गए, जो आगे आने वाले समय में भी नया मार्ग प्रशस्त करेंगे। प्रसाद जी ने कामायनी में संसार की परिवर्तनशीलता का उल्लेख करते हुए जीवन की क्षण भंगुरता की ओर भी संकेत किया है।

छायावाद के प्रमुख स्तम्भों में से एक 'जयशंकर प्रसाद' जी का साहित्यिक जीवन लगभग 1910 से आरंभ होता है। इसके बाद साहित्य की अनेक विधाओं में वह निरन्तर लिखते रहे। प्रसादजी की चर्चित कृतियाँ हैं : 'आँसू' , 'लहर' और 'कामायनी' (तीनों काव्य) 'स्कन्दगुप्त' , 'चंद्रगुप्त' , 'अजातशत्रु', 'ध्रुवस्वामिनी' (सभी नाटक) । 'तितली' और 'कंकाल' (उपन्यास)। इनके अलावा अनेक कहानियाँ और गंभीर निबंध भी उन्होंने लिखे हैं। प्रसाद साहित्य में पाठक को भारतीय संस्कृति से निकटतम साक्षात्कार होता है। "कामायनी" उनके द्वारा सृजित एक ऐसा ही उच्च कोटि का महाकाव्य है। जिसकी कथा के संबंध में स्वयं प्रसाद लिखते हैं –

"यह आख्यान इतना प्राचीन है कि इतिहास में रूपक का भी अद्‌भुत मिश्रण है। इसलिए मनु , श्रद्धा ,इड़ा आदि अपना ऐतिहासिक अस्तित्व रखते हुए भी सांकेतिक अर्थ की भी अभिव्यक्ति करें तो मुझे कोई आपत्ति नहीं।"

पंचम अध्याय

उपसंहार

इस महाकाव्य की कथा के स्रोत ऋग्वेद से लेकर ब्राह्मण, उपनिषद् व पुराणों में सन्निहित हैं। इस सन्दर्भ में जयशंकर प्रसाद ने कामायनी के आमुख में लिखा है : यह आख्यान इतना प्राचीन है कि इतिहास में रूपक का भी अद्‌भुत मिश्रण हो गया है। इसलिए मनु, श्रद्धा और इड़ा इत्यादि अपना ऐतिहासिक अस्तित्व रखते हुए, सांकेतिक अर्थ को भी अभिव्यक्त करें तो मुझे कोई आपत्ति नहीं। मनु अर्थात मन के दोनों पक्ष हृदय और मस्तिष्क का सम्बन्ध क्रमशः श्रद्धा और इड़ा से भी सरलता से लग जाता है। इन सबके आधार पर कामायनी की कथा सृष्टि हुई है। हां, कामायनी की कथा शृंखला मिलाने के लिए कहीं कहीं कल्पना को भी काम में ले आने का अधिकार मैं नहीं छोड़ सका हूं। यह महाकाव्य अनेकानेक विचारधाराओं का मिश्रण है। जो चिन्ता सर्ग से आरम्भ होकर आनन्द सर्ग पर समाप्त होता है। यह आनन्द बाह्य आनन्द न होकर आत्मानन्द है जो शाश्वत अनुभूतियों का परिणाम है।

यह महाकाव्य विशेष होते हुए भी सर्वकालिक है। इसमें प्रसाद जी ने मानव जीवन की अनेक जटिलताओं व विषमताओं को उद्घाटित करने का प्रयास किया है और इनका निवारण बताने के लिए प्राचीन भारतीय दर्शन का उपयोग किया है।

संक्षेप में कामायनी की कथा इस प्रकार है : देवगणों के उच्छृंखल स्वभाव के फलस्वरूप पृथ्वी पर घोर जलप्लावन आया। इसमें समस्त प्राणी डूब गए, केवल मनु जीवित बचे। वे अत्यन्त चिन्ताग्रस्त दृष्टिगोचर होते हैं। कालान्तर में उनके मन में आशा का संचार हुआ और वे यज्ञ करने लगे। उनका मिलन कामपुत्री श्रद्धा से हुआ और वे सुखपूर्वक गृहस्थ जीवन बिताने लगे। श्रद्धा के गर्भवती होने पर मनु उससे ईर्ष्या करने लगे। वे उसे छोड़कर विलासिता की खोज़ में भटकते हुए सारस्वत प्रदेश जा पहुंचे। उनकी भेंट वहां की अधिष्ठात्री इड़ा से हुई। जिसने स्वयं को व प्रदेश का शासन भार मनु को सौंप दिया। मनु ने इड़ा व उसकी प्रजा पर अत्याचार प्रारम्भ कर दिए तो उसकी प्रजा ने विद्रोह कर दिया। उधर श्रद्धा मनु को खोजते-खोजते अपने पुत्र मानव को लेकर सारस्वत प्रदेश पहुंच जाती है और घायल पड़े मनु की सेवा कर उसे ठीक कर देती है। मनु को ग्लानि का अनुभव होता है। वह रात्रि में ही वहां से चल देते हैं । श्रद्धा भी मानव को इड़ा को सौंप कर मनु

को खोजने चली जाती है। अन्त में श्रद्धा के सहयोग से मनु को त्रिपुर के दर्शन होते हैं और वे अखण्ड आनन्द में लीन हो जाते हैं।

सांस्कृतिक काव्य होते हुए भी कामायनी मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से एक सशक्त कृति है। इसके पन्द्रह सर्ग वास्तव में मानवीय मनोविकार ही हैं। इसमें मनोविज्ञान के प्रमुख तत्वों जैसे फ्रायड का कामवासना, मार्क्स का द्वंद्वात्मक व डारविन का विकासवाद परिलक्षित होता है।

कला पक्ष की दृष्टि से भी कामायनी एक प्रौढ़ रचना है। इसमें छन्दोबद्धता, शब्द योजना(शब्दालंकार व अर्थालंकार, भाषा एवं गेयता का सुन्दर मिश्रण है। डा़ नामवर सिंह के शब्दों में स(प्रसाद ने अपने युग की वास्तविकता को इतने व्यापक सामाजिक परिवेश में तथा भावना के गहरे स्तरों के साथ चित्रित किया है कि इन प्रतीकों में युग-युग को रसमग्न और प्रेरित करने की क्षमता आ गई है। इतने विशाल आधार पर इतने चित्रात्मक ढंग से आधुनिक समाज का संघर्ष किसी हिन्दी काव्य में चित्रित नहीं हुआ है।

कामायनी हिंदी भाषा का एक महाकाव्य है। इसके रचयिता जयशंकर प्रसाद हैं। यह आधुनिक छायावादी युग का सर्वोत्तम और प्रतिनिधि हिंदी महाकाव्य है। 'प्रसाद' जी की यह अंतिम काव्य रचना 1936 ई. में प्रकाशित हुई, परंतु इसका प्रणयन प्रायः 7-8 वर्ष पूर्व ही प्रारंभ हो गया था। 'चिंता' से प्रारंभ कर 'आनंद' तक 15 सर्गों के इस महाकाव्य में मानव मन की विविध अंतर्वृत्तियों का क्रमिक उन्मीलन इस कौशल से किया गया है कि मानव सृष्टि के आदि से अब तक के जीवन के मनोवैज्ञानिक और सांस्कृतिक विकास का इतिहास भी स्पष्ट हो जाता है।

कला की दृष्टि से कामायनी छायावादी काव्यकला का सर्वोत्तम प्रतीक माना जा सकता है। चित्तवृत्तियों का कथानक के पात्र के रूप में अवतरण इस काव्य की अन्यतम विशेषता है। और इस दृष्टि से लज्जा, सौंदर्य, श्रद्धा और इड़ा का मानव रूप में अवतरण हिंदी साहित्य की अनुपम निधि है।

सन्दर्भ सूची

१. कपुर श्यामचन्द, नई दिल्ली,हिन्दी साहित्यका इतिहास : ग्रंथ अकादमी,

२. विश्वंभर १९५८ई. कामायनी की टिकाः 'मानव' किताब महल, जीरो रोड,इलाहावाद,चतुर्थ संस्करण,

३. सिंह नामवर, नई दिल्ली,१९७९ ई. छायावादीः राजकमल प्रकासन, नेताजी सुभास मार्ग,

४. शाह रमेशचंद्र, नयी दिल्ली,१९७३,छायावाद की प्रासंगिकताःसरस्वती बुक डिपो,दरियागंज,

५. शाह रमेशचंद्र, नयी दिल्ली,१९८४ ई. जयशकर प्रसादः, साहित्य अकादमी, रविन्द्र भवन,फिरोजशाह मार्ग, नई दिल्ली

६. सिंहडाँ.उदयभानु नयी दिल्ली,११०००२ कामायनी-लोचनः ,राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड,

७. सिंह केदारनाथ, नयी दिल्ली-११०००२ कल्पना और छायावाद :वाणी प्रकाशन २१-ए, दरियागंज

८. सल्मा उम, ५०००९५ कामायनी में कामतत्वे- मिलिन्द प्रकाशन, हैदरावाद

९. www.wikipedia.com